THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC

FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.

-The TFIC Team.

॥ ॐ ॥

॥ श्री जिनाय नमः ॥

महात्मा पद-वाची जैन ब्राह्मणों

का

संक्षिप्त इतिहास

लेखक—

पं० काश्यपगोत्री कोरंटावाल अवटंकी

पं० वक्तावरलाल महात्मा

उदयपुर निवासी

ी संवत् २००२
न् १९४५ ई०

वीर संवत् २४७१
मूल्य २)

श्री हंसराज बच्छराज नाहटा
सरदारशहर निवासी
द्वारा
जैन विश्व भारती, लाडनूं
को सप्रेम भेंट –

रहने मे प्रजा को निर्विघ्न स्थान मे सुरक्षित रखने का विचार था, एकबार महाराज कुमार श्री प्रतापसिंहजी के कँवर श्रीअमर-सिंहजी की मन्नत उतारने को श्री कैलाशपुरी में श्री एकलिङ्गजी महाराज आये वहाँ देवारी भीतर उन्होंने अपने विचार माफिक सुरक्षित स्थान समझा क्योंकि यहाँ चारो तरफ पर्वतमाला होने से प्राकृतिक सुदृढ़ कोट और भूमि भी उर्वरा, अच्छा जलवायु का होना निश्चय कर नगर बसाना आरम्भ किया था। वि० सं० १६८२ मे हमारे पूर्वज रूपचन्दजी ने मेरता से यहाँ आकर पोसाल बाँधी जहाँ पर पोसाल नियत की उस मोहल्ले का नाम मोतीचोहट्टा के नाम से प्रसिद्ध है, इसके प्रमाण मे एक प्राचीन सन्द का हवाला देता हूँ। 'रूपचन्दजी के चतुर्थ पुत्र लाजी नाम के थे। वे व्याकरण पाठी थे। उनके हस्त लिखित एक शिलालेख वि० सं० १७०८ का वैशाख सुद ७ गुरुवार का कैलाशपुरी मे एकलिङ्गजी के मन्दिर में दक्षिण द्वार श्री कालिका माताजी के मन्दिर के पीछे श्री गोस्वामीजी महाराज बड़े रामानन्दजी महाराज के समाधि स्थान पर आज लौं प्रशस्ति रूप में विद्यमान है, इसके सिवाय और भी राज की सन्दो से यहाँ पर रहना सिद्ध होता है, रूपचन्दजी से लेकर बसन्तिलाल, गनपतलाल का सजरा नीचे दर्ज है।

रूपचन्दजी

रामचन्दजी	अमरचन्दजी	शुभकर्णजी	वेलाजी	गोपालालजी
|	राजनगर	करेड़ा	मोबिन्दगढ़	०

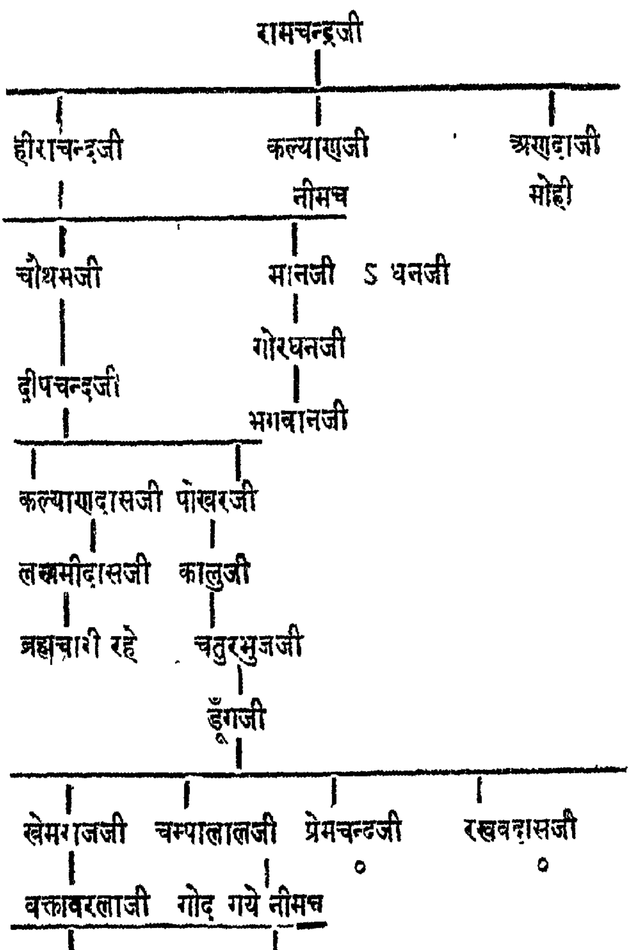

इस व्यक्ति के पिताजी का नाम खेमराजजी था। इनका जन्म समय संवत् १८६४ है। यह महाशय ज्योतिष, गणित, भूगोल, खगोल आदि शिक्षा में पूर्ण थे। इनकी तमद्दीक

चाहो तो महताजी राय पन्नालालजी की हवेली पर उनके कँवर फतहलालजी ने पुस्तकालय कायम किया है, उसमें उस समय के प्रसिद्ध पुरुषों के चरित्र समेत संक्षेप इतिहास के मौजूद हैं। उक्त पण्डितजी ने दो विवाह किये थे। पहला तो देलवाड़ा (मेवाड़) मे नाणावाल गच्छि भारद्वाज गोत्रीय पण्डित रतनजी के पुत्र मय्याचन्दजी की पुत्री वृद्धिबाई के साथ दूसरा विवाह नकुमई ग्वालियर साँडेर गच्छ वसिष्ठ गोत्री खुमाणजी की कन्या गेदबाई के साथ किया। इनकी ज्योतिष विद्या की प्रखरता के विषय में मैं सिर्फ एक ही उदाहरण देता हूँ। सं० १९१४, ईस्वी सन् १८५७ मे जो हिन्दुस्तानियो के व अंग्रेजो के युद्ध हुआ जिसको गदर के नाम से प्रसिद्ध किया जाता है, इस समय राजकीय ज्योतिष पण्डितो ने भीषण रूप से युद्ध होने की घोषणा की थी लेकिन इन महाशय ने एक भविष्य वाणी लिख मारफत मोड़जी गोटा वाला के श्री जी मे नजर कराई। उक्त वाणी मे यह मजमून था "मेवाड़ में बदले लोगों की सेना आवेगा लेकिन उदयपुर से १२ कोस के अन्तर पर युद्ध होगा, और वे लोग परास्त होकर भागेंगे। व उनके घोड़े शस्त्र वगैरह सामान श्री जी मे नजर होगा। मेवाड़ को हानि न पहुँचेगा और अंग्रेजो की हुकूमत कायम रहेगा। चुनाचे यह युद्ध रूकम गढ़ के छापर में हुआ और वे लोग परास्त होकर भाग गये। सामान यहाँ नजर हुआ, बाद अमन होने के सबे भविष्य वाणीयें नजर हुई उनमें यह ठीक मिली जिस पर महाराणाजी श्री स्वरूपसिंहजी साहब ने प्रसन्न होकर राज्य सन्मान से सन्मानित किए, याने स्वर्ण के कड़े सिरोपाव

अमरमाही पगड़ी बाँधने व डंके की पछेवड़ी बाँधने डांड़ी पहर कर रोजाना दर्बार मे आशीर्वाद देने के लिये आने का व राज मे पण्डित ज्योतिर्पियो में भरती करने आदि इज्जत बक्षी। इसका वृत्तान्त वि० सं० १९१४ पौष शुक्ला १२ की मिती में राजकीय कपड़ा का भण्डार व पाण्डेजी की ओवरी मे दर्ज है। बाद मे महाराणाजी श्री शम्भूसिहजी के राज समय मे राजकीय पाठशाला पण्डित रत्नेश्वरजी के निवेदन पर कायम हुई। इसका नाम 'शम्भूरत्न पाठशाला' रक्खा गया। वहाँ पर शहर के छात्र हमारे पोसाल पर पढ़ते थे उनको लेजा कर वहाँ स्थापित किए और उक्त पण्डितजी को प्रधान अध्यापक (हेडमास्टर) नियत किये। और मिस्टर इंगल साहब को सुपरिण्टेण्डेण्ट कायम किया। हमारे पोसाल पर शहर के छात्र, दिवाणादिको के पुत्र व सर्व जाति के लड़के पढते थे। वि० सं० १९२८ में इनको ग्राम का दान देना निश्चय हुआ। लेकिन यह आध्यात्मिक बल के थे तो निवेदन कराया के मै पृथ्वी का दान लेना नहीं चाहता उस पर मासिक २०) रुपये कर बक्षे और ताम्बापत्र कर बक्षा "उपर श्रीरामजी वगैरह दस्तूर माफिक सही व भाला फिर महाराजधिराज महाराणा जी श्री शम्भूसिहजी आदेशात् माहात्मा खेमराज डूंगरसिंह का कस्य थने रुपया २०) अखरे बीस महावारी दाण का धर्मादा मे श्रीरामार्पण कर बक्श्या है सो हमेशा मिला जायगा। यो पुण्य श्री जी को है आगे मामूली श्लोक, इन महाशयो के नाम शिष्य धर्मपालन करने वालो के पात्रो का अलकाब भी वास्ते मुलाहजे के संक्षेप रूप में दर्ज करता हूँ। महता अगर चन्दजी के वंशज महता देवी चन्दजी

रुघनाथदासजी का पत्र जहाजपुर से वि० सं० १६२२ वै० सुद ७ "सिद्ध श्री उदयपुर शुभस्थाने सर्वोपमा विराजमान लायक बावजी श्री खेमराजजी पेमराजजी जोग जहाजपुर से देवचन्द रुघनाथदास की वन्दना वाँचसो अठाका समाचार भला छे आपका सदा भला चाहिजे तो म्हाने परम सुख होवे आप मोटा छो पजनीक छो सदीव मूँ कृपा महरबानी राखो छो ज्यूँ ही रखावसी नीका रहे सो डोला को जस राव सो हार्स्यों पर आपकी माजी ने पावाँ धोग कीजो। महताजी मुरली धरजी को पत्र सं० १६२५ फागण विद ८ "सिद्ध श्री उदयपुर शुभ सुथाने सरब ओपमा लायक गुरु महाराज श्रीखेमराजजी एतान जहाजपुर थीं महता मुरली धर लिखता दण्डवत वञ्चावसी अप्रञ्च॥ महता अजीतसिंहजी को पत्र बावजी श्री ५ श्री खेमराजजी सूँ वन्दना वञ्चावसी आछा रेसी कृपा महरबानगी हे ज्यूँ ही रेवे अपरञ्च। महताजी पन्नालालजी सी. आई ई. "सिद्ध श्री गुरु महाराज श्री ५ श्री खेमराजजी हजूर पन्नालाल की दण्डवत मालूम होत्र महरबानी है ज्यूँ ही रहे। वि० सं० १६२२ का चेत वद २ इनको सं० १८८७ का पोष विद ५ सी. आई. ई. का खिताब तमगा गवर्नमेण्ट सरकार आलीये हिन्द से अता हुआ। इनके लघु भ्राता लक्ष्मीलालजी का पत्र कनेरे ग्राम से। 'सिद्ध श्री उदयपुर शुभ सुथाने सरब ओपमा सदा विराजमान अनेक ओपमा लायक पुज्य बावजी साहब श्री १०८ श्री खेमराजजी एतान श्रीकणेरा थी सदा सेवक लछमीलाल महता लि० दण्डोत पावाँ धौग मालूम होवे अठारा समाचार श्री आपकी कृपा सुनजर कर भला है आपरा सदा भला चावे तो सेवक ने परम आनन्द होवे सदा सेवक पर सुनजर गुरु पणो है जी सूँ

ज्यादा रखावेगा। वि० सं० १६२० प्र० सावण विद ६ कटारिया महताजी बख्तावर सिंहजी वि० सं० १६२० वै० विद ४ पत्र "सिद्ध श्री गुरु महाराज श्रीखेमराजजी सूँ महता बख्तावरसिंह जी अरज मालूम होवे। महताजी रुघनाथसिंहजी रो पत्र वि० सं० १६२६ पोष सुदी १३। 'सिद्ध श्री श्री श्री श्री श्री १०८ श्री श्री बावजी साहेब श्री खेमराजजी हजूर में कमतरीन रुघनाथसिंह की दण्डवत मालूम होवे। उमरावा में देलवाड़ेराज राणा फतह-सिंहजी को रुको—गुरुजी खीमराजजी सुराणा फतहसिंह को पावाँ लागणो बाँचजो। इन पण्डितजी का परलोकवास वि० सं० १६३० का श्रावण शुक्ला १ को ३६ की आयुष्य मे हुआ इन महाशयो ने अपने अन्तकाल की तिथि से एक वर्ष पूर्व एक टीप लिखी कि वि० सं० १६३० का श्रावण शुक्ला १ क दिन मेरा शरीर छूट जावेगा और दूसरी टीप मे यह दर्ज किया कि वि० सं० १६३१ का आश्विन कृष्णा १३ के दिन श्री जी भी स्वर्गवास पधार जावेगा। चुनाचे श्रावण सुद १ के दिन का शरीर छूट गया। यह हाल श्री रावजी रावबहादुर बख्तसिंहजी बेदला ने श्री जी से अरज किया उस पर कलमदान में से टीपे निकाल मुलाहजे फरमाई गई और फरमाया कि आज खेमराज जैसा ज्योतिषी मेवाड़ मे से उठ गया श्रीएकलिंगजी की मरजी है—महाराणाजी श्री जी शम्भू सिंहजी जी. सी. एस. आई का जन्म वि० सं० १६०४ पौष कृष्णा १, राज्याभिषेक वि० सं० १६१८ का सुद १५ स्वर्गवास सं० १६३१ का आश्विन कृष्णा १३ हुआ।

(बख्तावरलाल का जीवन चरित्र)

इस व्यक्ति का जन्म विक्रम संवत् १६२३ का आषाढ़ कृष्णा १२ सोमवार को हुआ दो वर्ष के बाद मातेश्वरी का परलोक वास होगया, और सात वर्ष की आयु में पिता भी परलोक वास कर गये। इस संकटमय अवस्था का समय श्रीमान राय पन्नालालजी सी. आई. ई. प्रधान रियासत मेवाड़ व इनके भ्रातागणों व श्रीमान महताजी बख्तावरसिंहजी व उनके सुपुत्र कँवर गोविन्दसिंहजी की सहायता से व्यतीत हुआ। इस बाल्यावस्था में उस जमाने मुआफिक सामान्य पढ़ाई की गई। वि० सं० १६३६ का आसाढ़ मास में राज श्रीमहक्मे खास में बजुमरे अहलकारों में मुलाजिम हुआ। वि० सं० १६-४२ का मृगशीर्ष मे पहला विवाह कांकरोली मे ओसवाला अवटंकी गौत्तम गौत्री नाथूलालजी की कन्या से हुआ। इनसे बसन्तीलाल का जन्म वि० सं० १६४६ में हुआ। इनका अन्तकाल वि० सं० १६५७ में होगया। फिर दूसरा विवाह ग्राम करेड़ा राजाजी का में गौतम गौत्री ओसवाल अवटंके रामचन्द्रजी की कन्या से हुआ। इनसे एक बाई हुई और वि० सं० ६८ में इनका इन्तकाल होगया। तब फिर तीसरी शादी चाणसमा ई. बड़ोदा गुजरात में पुनम्या अवटंक के मढर गौत्र में पं० ताराचन्दजी की कन्या से हुई। इनसे गनपतलाल का जन्म वि० सं० १६७० का मृगशीर्ष शुक्ला ६ बुधवार के दिन हुआ पिताजी का परलोक वास वि० सं० १६३० में हुआ था। उस अरसे में ब्यो २०) मासिक ताम्र पत्र के मिलते थे

वह दाणां दारोगा ने देना बन्द कर दिया उस पर यह तनख्वाह पीछी मेरे नाम पर साबित कराने का हुक्म होने के लिये राज श्रीमहक्मे खास में दरख्वास्त दी। उस पर महेक्मे मौसूफ से असल महक्मे माल में भेजी जावे के बदस्तूर सायल ने देवावता रहे, मत्ररखा भाद्रपद शुक्ला ४ वि० सं० १६२० हु. नं. ३१३ हुआ और महक्मे माल स हु० नं० ११३ भा० सु० ८ सं० १६३०, नकल वास्त तामील हुक्म महकमे खास के दारोगा दाणा पास भेजी जावे। इस पर तनख्वाह पीछी मिलनी शुरू होगई। पिताजी के इन्तकाल के १२ दिन बाद कपड़ा के भण्डार से सफेद पाग आई वह बाँधकर श्रीजी में आशीर्वाद देने गया तो नजर करने बाद महताजी पन्नालालजी ने अर्ज किया के "यो क्षेमराज को बेटो है अरहका आपको श्रीजी इज्जत बक्षी वी माफक उत्तर कार्य्य करनो भी जरूरी है और इंके सिवाय इंके पिता के सरकारी दुकान का करजा ५००) ब्याजु है। यो जो बालक है। वी पर श्रीमहाराणाजी श्रीशम्भूसिंहजी ने आज्ञा बक्षी के उत्तर कार्य्य के लिये तो ५०१) नकद और करजा छूट किया जावे। उसकी तामील होकर ५०१) नकद मिले। जिसे ब निगरानी महता बख्तावरसिंहजी उत्तर क्रिया में द्वादशा किया जाकर जाति में १) एक कल्दार रुपे की दक्षिणा दी गई। फिर महाराणाजी श्री सज्जनसिंहजी के राज्य समय मे रियासत का बजट बान्धा गया। उसमें यह तनख्वाह धर्म सभा कायम कर कुल धर्म खाता उसके तालुक किया गया। उस समय २०) के बजाय १०) माहवार कर दिया गया। उस का हाल व पंडित ज्योतिषियों में नाम दरज होने का हाल साबत

का वहीड़ा जो राजश्री महकमें खास में खास श्रीजी हजूर के दस्तखतों का है उसमें दर्ज है। वि०सं० १९४५में करनल सी. के. एम. वाल्टर साहब बहादुर एजेन्ट गवर्नर जनरल राजपूताना मु० आबू ने एक सभा वास्ते कायदा राजपूत सरदारों के राजपूताना में अपने नाम से कायम की। चुनाचे उसकी शाखा उदयपुर में भी कायम हुई वि. सं० १९४६ उसमें मेम्बर सर्दार इस मुआफिक मुकर्रिर हुए। वेदले राव बहादुर रावजी तख्तसिंहजी व रावतजी जोधासिंहजी सलूम्बर, देलवाड़े राज राणा फतहसिंहजी राय बहादुर, व महताजी राय पन्नालालजी सी. आई. ई. मेम्बर व सेक्रेटरी व महामहोपाध्याय कविराज शामलदासजी, व सही वाला अर्जुनसिंहजी, व पुरोहित पद्मनाथजी, व राव बख्तावरजी, यह आठ मेम्बर मुकर्रि हुए। इस सभा में तरक्की देकर महताजी मौसूफ ने इस व्यक्ति को महकमे खास से यहाँ बदली करदी। फिर वि० सं० १९४७ में झालावाड़ में झाड़ोल व ठीकाने मादड़ी के दरमीयान मौजे अदकालिया के बराड़ का तनाजा था, उसकी तहकीकात पर भेजा गया। साथ में सवार, पहरा, ऊंट, चपरासी हरकारा घोड़ा था। वहां तहकीकात करता था उस समय राजश्री महकमें खास से रु० नं० ११७३ मवरखा चेत सुद १४ वि० सं० १९४७ 'सिद्धश्री श्री बख्तावरलालजी महात्मा जोग राज श्री महकमे खास लि. अप्रंच' सादिर हुआ, और भी राज के महकमें जात व अदालतों की तहरीरें इस माफिक जारी हैं। अदालत सदर दिवानी, मुन्सफी व पुलिस वगेरा से "सिद्धश्री महातमाजी श्रीबख्तावरलालजी योग्य। वि० सं. १९५८ में वास्ते फैमाइस

कानून सभा तमाम इलाके मेवाड़ में दौरा किया। साथ में सवार पहरा, ऊँट, घोड़ा, सांड़िया, चपरासी वगैरा थे। उस समय में ठिकाने उमरावान में से फोजदार कामदारी की तहरीरात इस माफिक हुई मसलन बेगम "सिद्धश्री मुकाम बेगम सुभसुथाने सर्व ओपमा बावजी श्री·बख्तावरलालजी अन्डर सेक्रेटरी वाल्टर कृत राज पुत्र हित कारिनी सभा बेगू से रावतजी श्री सवाई मेघासिंहजी का फौजदारां कामदारां लिखता जुहार वांचसी। अठाका समाचार श्रीजी की कृपाकर भला है। राज का सदा भला चाहिजे राज म्हारे घणी बात है। सदा हेत इकलास है ज्यूं ही रखावसी अप्रंच"। ठिकाने हमीरगढ़ "सिद्धश्री महात्मा-जी श्री बख्तावरलालजी जोग हमीरगढ़ थी रावत श्रीमदनसिंहजी लिखता जैश्रीएकलिंगजी की वांचसी। अठाका समाचार श्री-जी की सुनजर कर भला है। राजका सदा भला चाहिजे। अप्रंच"। ठिकाना बोहड़ा से "सिद्धश्री मुकाम दौरा सुभसु-थाने सरव ओपमा जोग बावजी श्री बख्तावरलालजी जोग बोहड़ा थी रावतजी श्री नाहरसिंहजी लि० जुहार वांचसी। अठाका समाचार श्रीजी की सुनजर कर भला है राज का सदा भला चाहिजे अप्रंच। ठिकाने लूणदा "सिद्धश्री मुकाम लूणदा सुभसुथानेक सरव ओपमा जोग बावजी श्रीबख्तावरलालजी जोग लूणदा थी रावतजी श्री जवानसिंहजी लिखता जुहार वांचसी अठाका समाचार श्रीजी की सुनजर कर भला है। राजका सदा भला चाहिजे। अप्रंच। रूपाहेली बड़ी "सिद्धश्री श्रीराजश्री वाल्टर कृत राज पुत्र 'हितकारनी सभा का अन्डर सेक्रेटरी श्री बख्तावर लालजी महात्मा जोग रूपाहेली कला से राजश्री

है कि जो कुछ भी मैंने सुना था वो बिलकुल सत्य निकला। सिर्फ शहर में ही इलाज नहीं करते, गावों में भी जाते है। मुझे इस बात को जानकर बड़ा आनन्द हुआ कि यह अपनी चिकित्सा मे आयुर्वेदीय औषधिया भी काम में लेते हैं और स्वयं बनाने का कष्ट उठाते है। मैं इनकी हर बात मे सफलता चाहता हूँ।

इनसे मेरा सम्बन्ध थोड़े ही दिनों का नही है लेकिन कई पुश्तो से चला आरहा है। मैं ५०) रु० गरीबो को दवा मुफत बाटने के लिये भेट करता हूँ। तारीख १५-८-१९२९ ई.

द. महता फतहलाल

सर्टिफिकेट डाक्टर एस. एच पण्डित डी. ओ. एम. एस इङ्गलेण्ड एम. एस, बोम्बे ता० २९—११—२९ ई. 'ये महाशय महाराणा साहिब श्रीयुत् फतहसिंह जी के नेत्रों का इलाज करने आये तब स्वयं अस्पताल मे आकर निरीक्षण करके दिया':—

'डाक्टर बसन्तीलाल से उदयपुर मे फिर से मिलने से बहुत खुशी हुई जिनको मैं बहुत बरसो से विद्यार्थी व डाक्टरी की हालतो में बखुबी जानता हूँ, हिन्दुस्तानी व अंग्रेजी दोनो तरह की चिकित्सा को ठीक तरह से जानते है इनको आयुर्वेदिक पद्धति के अनुसार इलाज करने का बहोत शोक है और यहाँ की जनता की जरुरीयात को पूरी करने के लिये ये पूरी २ कोशिश करते है, यह हर एक विषय मे अच्छा शोक रखते है और मुझे पूरी उम्मेद है कि यह अपनी महिनत व दील-चस्पी के कारण एक अच्छे चिकित्सक की शोहरत हासिल करलेगे अब

ॐ स्वस्तिनःइन्द्रोवृद्धश्रवा स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः स्वस्ति-नस्तार्क्षोअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्दधातु । दीर्घायुस्त्वाय बलायुर्वाशुभंजातायु ॐ रक्षर अरिष्टनेमि स्वाहाः ॥ यहां जरा गौर कीजिये कि अरिष्टनेमि जैन में २२ वां तीर्थंकर है इसलिये यह मन्त्र जैनियों का होना साबित है ।

फिर यजुर्वेद मन्त्र---ॐ त्रैलोक्ये प्रतिष्ठाना चतुर्विंशति तीर्थंकराणां ऋषभादि वर्द्धमानान्तानं सिद्धानां शरणं प्रपद्ये ।

अब पौराणों के प्रमाण

श्रीमद्भागवत के ५ स्कन्द में श्रीऋषभदेव को साक्षात् परमेश्वर का अवतार मानकर इतिहास दिया और आखीर में नमस्कार किया ।

"नित्यानुभूत निजलाभनिवृत्त तृष्णाः । श्रेयस्य तद्रचनया चिरसुप्तबुद्धेः । लोकस्यपयोकरुणयो भयमात्म लोकमाख्या नमोभगवते ऋषभायतस्मै ।

ब्रह्माण्डपुराण में—"नाभिस्तु जनयेत्पुत्रं मरुदेव्या मनोहरम् । ऋषभं क्षत्रिय श्रेष्ठ सर्व क्षत्रस्य पूर्वकम् ॥ "ऋषभाद्भारतो जज्ञेवीर पूत्रं शताग्रजः । राज्याभिषिच्य भरतं महाप्राव्रज्यमाश्रितः ॥

शिवपुराण में—शिवोवाच: "अष्टषष्टीषु तीर्थेषु यात्रायां यत् फलं भवेत् । आदिनाथस्य स्मरणेनापितद्भवेत् ॥

योग वसिष्ट रामायण—वैराग्य प्रकरण में स्वयं श्रीरामचन्द्र आज्ञा फर्माते हैं—

"नाहम रामो नमेवाञ्छामावेषु च तमे मनः। शान्तिमा स्थातुमिच्छामिचात्मनेवजिनो यथा।।"

नगरपुराण के भवावतार रहस्य में—"अकारादि हकारान्त मुर्द्धा धोरेफ संयुते नाद बिन्दु कलाकान्त चन्द्र मण्डल सन्निभं। एतद्देविपरंतत्वयो विजानातितन्तवः संसार बन्धनं छित्वासगच्छेत् परमगतिम ॥

प्रभास पुराण में—"भवस्य पश्चिमे भागे वामने न तपः कृतम् तेनैव तपसा कष्टः शिवः प्रत्यक्षतांगतः ॥ पद्मासन समासीनः श्याम मुर्तिर्दिगम्बरः। नेमनाथ शिवोथेवं नाम चक्रेऽस्य वामनः ॥

कलिकाले महाघोरे सर्व पाप प्रणाशनम्।
दर्शनात् स्पर्शनादेव कोटि यज्ञ फल प्रदम।'

देखो जैन तीर्थंकरों में नेमनाथ २२ वां तीर्थकर है और इनका श्याम वर्ण होना ग्रन्थों में लिखा हैं।

नागपुराण—दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरा सुर नमस्कृतः।
नीतित्रयस्य कर्तायो युगादौ प्रथमोजिनः ॥
सर्वज्ञ सर्वदर्शी च सर्व देव नमस्कृतः।
छत्रत्रयी भिरापुज्यो मुक्तिमार्गं सौवन्दन ॥
आदित्य प्रमुखा सर्वे बद्धां जलिभिरीशितुः।
ध्यायन्ति भावतो नित्यं दध्रियुग निरंजम् ॥

कैलाश विमले रम्ये ऋषभोयं जिनेश्वर ।
चकार स्वावतारं यो सर्वः सर्व गतः शिवः ॥

भवानी सहस्र नाम से-"कुण्डासना जगद्धात्री बुद्धमाता जिनेश्वरी ।
जिनमाता जिनेन्द्रा च शारदा हँस वाहिनी ॥

मनुस्मृति में कुलकरों के नाम दिये जिनको मनु कहते हैं—

कुलादिजं सर्वेषां-प्रथमो विमल वाहनः ।
चक्षुष्मांश्च यशास्वी वाभिचन्द्रोथव प्रसेनजित् ॥
मरुदेवी च नाभि श्च भरते कुल सत्तमः ।
अष्टमो मरुदेव्यां नाभेर्जा उरुक्रमः ॥
दर्शयन वर्त्म वीराणां सुरा सुर नमस्कृतः ।
नीतित्रय कर्तायो युगादौ प्रथमो जिनः ॥

भर्तृहरिशतक वैराग्य पुराण—

एको रागीषु राजते प्रियतमा देहर्द्धि धोरिहरो ।
नीरागेषु जिनो विमुक्त ललना संगो नयस्मात्परः ॥
दुर्वार स्मरबाण पन्नग विष व्यासक्त मुग्धोजन ।
शेषकाम विडंबितोहि विषयान्भोक्तु नमोक्तुत्तम ॥

दक्षिणा मूर्ति सहस्र नाम से—

शिवोवाचः—जैन मार्ग रतोजैनो, जितःक्रोध जितामतयः ॥

वैशम्पायन सहस्र नाम—

कालनेमि निहावीरः शूरः शौरि जिनेश्वरः ।

दुर्वासा ऋषि कृत महिम्न स्तोत्र—

तत्र दर्शने मुख्य शक्तिरिति चत्वं ब्रह्म कर्मेश्वरी ।
कर्ताऽर्हन पुरुषो हरिश्व सविता बुद्धः शिवस्त्वं गुरु ॥

श्री हनुमान नाटक—

यशैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो ।
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाण पटवः कर्तेवी नैयायका ॥
अर्हन्नित्यथ जैन शासन रताः कर्मेति मीमाँसकाः ।
सोयं वो विद्धातुवांछित फलं त्रैलोक्यनाथ प्रभु ॥

इन धर्म ग्रन्थों के सिवा व्याकरण से भी प्राचीनता सिद्ध होती है ।

शाकटायनाचार्य ने स्तुति की है—

नमः श्रीवर्द्धमानाय (महावीर) प्रबुद्धा शेषवस्तवे ।
येन शब्दार्थ सम्बन्धा सार्वर्ण सुनिरुपिताः ॥

आगे देखिये यही शाकटायनाचार्य्य अपने व्याकरण के प्रत्येक पदान्त में "महा श्रमण संघाधिपतेः श्रुत केवलि देशी चार्य्यस्य शाकटायनस्य" यह शाकटायन आचार्य्य परम जैनी थे जैसा कि टीक कार यक्ष वर्मन कहते है "स्वस्ति श्री सकल ज्ञान साम्राज्य पदमासवान् महाश्रमण संघाधिपतिर्यशाकटायन ।" शाकटायन के उणादि सुत्र में "जिन" शब्द व्यवहारित हुआ है ।

इरण जस जिनिङ्गुप्य विभ्योनक सुत्र २५६ पाद ३ सिद्धान्त-कौमुदी कर्ता ने इस सुत्र की व्याख्या में 'जिनोऽर्हन कहा है।

मेदनी कोष मे भी "जिन" शब्द का अर्थ "अर्हत" जैन धर्म के आदि प्रचारक हैं।

वृत्तिकारगण भी "जिन" के अर्थ में 'अर्हन्' कहते हैं। यथा उणादि सुत्र सिद्धान्त कौमुदी।

आधुनिक काल के योरोपियन भी जैन धर्म की प्राचीनता समर्थन करते हैं। जैसा कि जर्मन, के डा. जेकोबी ४० वर्ष से जैन साहित्य का अभ्यास कर रहे हैं और कितने ही जैन स्कालर तैयार किये हैं। बल्कि सन् १९१५ई० मुताविक़ वीर संवत् २४४२ में जैन साहित्य सम्मेलन जोधपुर में लम्बा भाषण दिया था।

इसी तरह बंगवासी एम. एम. डाकृर शतीशचन्द्र विद्याभूषण एम. ए. पी. एच. डी. प्रेसिडेण्ट जैन लिटरेरी कानफ्रेन्स जोधपुर में अपनी वकृतादि जिसमे जैन धर्म के महत्व का वर्णन किया—

इसके सिवाय सन् १९०४ ई० मे बड़ोदा नगर में कान्फ्रेन्स के मौके पर श्रीमान् बड़ौदा नरेश ने जैन धर्म की प्राचीनता व प्रसंशा का व्याख्यान दिया—

फिर इसी सन् की ता० ३० नवम्बर के दिन भारत गौरव के तिलक पुरुष शिरोमणि इतिहासज्ञ माननीय पण्डित बाल

गंगाधर तिलक सम्पादक केशरी ने अपने व्याख्यान मे कहा कि "जैन-धर्म अनादि है।

यह विषय निर्विवाद है और जैन धर्म ब्राह्मण धर्म के साथ निकट सम्बन्ध रखता है, शक चलाने की प्रथा (कल्पना) जैन भाइयो ने ही उठाई। गौतम बुद्ध महावीर का शिष्य था, बौद्ध धर्म के पहले जैन धर्म का प्रकाश था। जैन धर्म के ही "अहिंसा परमो धर्म" इस उदार सिद्धान्त ने ब्राह्मण धर्म पर चिरस्मरणीय छाप मारी है।

हिंसक यज्ञ छुडाये। जिन यज्ञो मे हजारो पशुओ की हिंसा होती थी इसके प्रमाण मेघदूत आदि काव्यों मे मिलते हैं। यह श्रेय जैन धर्म के ही हिस्से मे है। ब्राह्मण और हिन्दुओ में माँस भक्षण और मदिरा पान बन्द हो गया यह भी जैन-धर्म का ही प्रताप है-पूर्वकाल मे जैनधर्म के कई धर्म-धुरन्धर पण्डित हो गये हैं।" इसके सिवाय ज्योतिष शास्त्री भास्कराचार्य्य के ग्रन्थों से भी इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है।

और देखिये सु-प्रसिद्ध श्रीयुत महात्मा शिवव्रत लालजी वर्मन एम. ए. सम्पादक 'साधु' 'सरस्वती-भण्डार', तत्वदर्शी' 'मार्तण्ड' लक्ष्मी भण्डार' सन्त-सन्देश' ने साधु नामक उर्दू मासिक पत्र जनवरी सन् १९११ ई० के अंक में प्रकाशित किया है। उसके कुछ वाक्य यहाँ उद्धृत करता हूँ—

(१) 'गये दोनो जहाँ नजर से गुजर, तेरे हुस्न का कोई बशर न मिला'

(२) यह जैन आचार्यों के गुरु पाक दिल, पाक खयाल मुज-स्सम पाकी व पाकी जगी थे। हम इनके नाम पर और इनके बे नजीर नफ्सकुशी व रिआजत की मिसाल पर जिस क़द्र नाज़ (अभिमान) करें बजा है।

हिन्दुओ ! अपने इन बुजुर्गों की इज्जत करना सीखो...... तुम इनके गुणों को देखो, उनकी पवित्र सूरतो का दर्शन करो— उनके भावो को प्यार की निगाह से देखो 'यह धर्म की कर्म की चमकती, दमकती, झलकती हुई मूर्ति है.......................

उनका दिल विशाल था व एक बे पाँया कनार समन्दर था। इन्होंने मनुष्य क्या सर्व प्राणियो की भलाई के लिए सबका त्याग किया और अपनी जिन्दगी का खून कर दिया। यह अहिंसा की परम ज्योति वाली मूर्तियाँ है। यह दुनियाँ के जब-र्दस्त रिफार्मर है। यह ऊँचे दर्जे के उपदेशक हैं। यह हमारी कौमी तवारिख के कीमती बहुमूल्य रत्न हैं। पार्श्व यह ऐतिहा-सिक पुरुष हता ते बात तो बधीरीते संभवित लागे छे, केशि स्वामि के जे महावीर स्वामि ना समय माँ पार्श्व ना सम्प्रदाय नो एक नेता होय तेम देखाय छो। जरमन जेकोनी "सब से पहिले इस भारत वर्ष में ऋषभदेव नाम के महर्षि उत्पन्न हुए" वे दयावान भद्र परिणानी पहले तीर्थंकर हुए।

जिन्होंने मिथ्यत्व अवस्था को देख कर, सम्यग्-दर्शन, सम्यग्-ज्ञान और सम्यग्-चरित्र रूपी मोक्ष शास्त्र का उपदेश किया। इसके पश्चात अजीत नाथ से लेकर महावीर तक तेइस तीर्थंकर अपने २ समय में अज्ञानी जीवों का मोह अन्धकार

नाश करते रहे। श्रीतुकाराम शर्मा लट्ट, बी. ए. पी. एच. डी. एम. आर. ए. एस. एम. ए. एम. बी एम. जी. ओ. एस. प्रोफेसर क्वीन्स कालेज बनारस, जैसे उन्हे आदि काल में खाने, पीने, न्याय, नीति, कानून का ज्ञान मिला वैसे ही अध्यात्म शास्त्र का ज्ञान भी जीवों ने पाया। और वे अध्यात्म शास्त्र में सब है। जैसे 'साँख्य योगादि 'दर्शन और जैनादि दर्शन' तब तो सज्जनों आप अब अवश्य जान गये होगे कि जैन मत तब से प्रचलित हुआ, जब से संसार में सृष्टि का आरम्भ हुआ–(सर्वतंत्र, स्वतन्त्र सत्सम्प्रदाय स्वामि राम मिश्र शास्त्री)

वेदों मे सन्यास का नाम निशान भी नहीं है, उस वक्त में संसार छोड़ कर वन मे जाकर तपस्या करने की रिती वैदिक ऋषि नही जानते थे। वैदिक धर्म सन्यास-आश्रम की प्रवृत्ति ब्राह्मण काल मे हुई है। जिसका समय करीब ३००० वर्ष जितना पुराणा है। यही राय श्रीयुत रमेशचन्द्र दत्त अपने 'भारत वर्ष' की प्राचीन सभ्यता का इतिहास नामक पुस्तक में लिखते हैं। तब तक के दूसरे ग्रन्थों की रचना हुई जो 'ब्राह्मण' नाम से पुकारे जाते हैं। इन ग्रन्थो में यज्ञो की विधि लिखी है। यह निस्सार और विस्तिर्ण रचना सर्व साधारण के क्षीण शक्ति होने और ब्राह्मणों के स्वमताभिमान का परिचत देती है। संसार छोड़ कर वन में जाने की प्रथा जो पहिले नाम मात्र को भी नहीं थी, चल पडी और 'ब्राह्मणो' के अन्तिम भाग अर्थात् आरण्य मे वन की विधि क्रियाओं का वर्णन है।

भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने इतिहास-समुच्चयान्तर्गत काश्मीर की राजवंशावली में लिखा है। कि "काश्मीर के राज-वंश में ४७ वाँ अशोक राजा हुआ, इसने ६२ वर्ष राज्य किया। श्रीनगर बसाया और जैन मत का प्रचार किया। यह राजा शचीनर का भतीजा था। मुसलमानों ने इसको शुकराज व शकुनी का बेटा लिखा है। इसके समय मे श्रीनगर में ६ लाख मनुष्य थे। इसकी सत्ता समय सन् १२६४ इस्वी पूर्व कहा है। (देखो इतिहास समुच्चय पृष्ठ १८)" और भी इतिहास समुच्चय में रामायण का समय वर्णन करते समय पृष्ठ ६ पर अयोध्या-काण्ड मे हरिश्चन्द्र जी लिखते हैं। "अयोध्या की गलियो मे जैन फ़कीर फिरा करते थे" (बाबू हरिश्चन्द्र अग्रवाल खास वैष्णव सम्प्रदाय के थे।)

फिर डाक्टर फुहररने "एपिग्राफी औफ इण्डिया" के वाल्यूम २ पृष्ठ १०६-२०७ पर लिखा है। "जैनियों के बाइसवे तीर्थंकर नेमीनाथ एक एतिहासिक पुरुष हैं।"

भगवद्गीता के परिशिष्ट मे श्रीयुत 'बखे' स्वीकार करते हैं कि नेमनाथ श्रीकृष्ण के भाई थे। जब कि २२ वें तीर्थंकर श्रीकृष्ण के समकालीन थे तो शेष २१ तीर्थंकर श्रीकृष्ण से कितने पहले होने चाहिये।

मि. आर जे० एडवाई मिशनरी, ——— निसन्देह जैन धर्म ही पृथ्वी पर एक सच्चा धर्म है। और यही मनुष्य का

आदि धर्म है और जैनियों में आदिश्वर को बहुत प्राचीन और प्रसिद्ध पुरुष जैनियों के २४ तीर्थंकरो मे सबसे पहले हुए हैं। ऐसा कहा है।

भारत मे पहले ४०००००००० जैनी थे। उस मत में से निकल कर बहुत लोग दूसरे धर्मों मे चले गये जिससे संख्या कम हो गई।

बाबू कृष्ण नाथ बनर्जी "जैनी जम" मे लिखते हैं। भगवान महावीर के पश्चात विक्रम १३ वीं शताब्दियों तक जैनधर्म अच्छी उन्नति पर था। मौर्यवंश, कुल चुरिवंश, अध्रमी वंश, कदम्ब वंश, राष्ट्रकूट वंश, परमार वंश, चौल्पूक्य वंश के राजाओ ने धर्म की बहुत उन्नति की जिसके शिला लेख और ताम्र पत्र आज इतिहास मे उच्च स्थान प्राप्त कर चुके है।

श्रीयुत महामहोपाध्याय सत्य सम्प्रदाचार्य सर्वान्तर पं० स्वामी राम मिश्र शास्त्री भूत प्रोफेसर संस्कृत कॉलेज बनारस अपने व्याख्यान मे, जो पौष शुक्ला १ विक्रम संवत् १९६१ मे काशी मे हुआ कहते हैं—

(१) वैदिक मत और जैन मत सृष्टि के प्रारम्भ से बराबर अविछिन्न चले आये हैं। और इन दोनो मतों के सिद्धान्त विशेष सम्बन्ध रखते हैं। जैसा कि पहले कह चुका हूँ। अर्थात् सत्यकार्य्य वाद, सत कारण वाद, परलोकास्तित्व, आत्मा का निरविकारत्व, मोक्ष का होना और उसका नित्यत्व, जन्मान्तर के पुण्य पाप से जन्मान्तर मे फल

भोग, व्रतोवासादि व्यवस्था, प्रायश्चित्त व्यवस्था, महा-जन पूजन, शब्द प्रभारव्य इत्यादि समान है।

(२) जिन जैनो ने सब कुछ माना है उनसे घृणा करने वाले कुछ जानते ही नहीं और मिथ्या द्वेष मात्र करते हैं।

(३) जैन और बोद्ध में जमीन आसमान का अन्तर है दोनों को एक जानकर उससे द्वेष करना अज्ञानियों का कार्य्य है।

(४) सबसे अधिक अज्ञानी वे हैं जो जैन सम्प्रदाय के सिद्ध लोगों में विघ्न डालकर पाप के भागी होते हैं।

(५) सज्जनों ! ज्ञान, वैराग्य, शान्ति, क्षांति, अदम्भ, अनिर्ष्या, अक्रोध, अमात्सर्य, अलोलुपा, शम, दम, अहिंसा, सम-दृष्टिता इत्यादि गुणों में से प्रत्येक गुण ऐसा है कि जिस में वह पाया जावे उसकी बुद्धिमान लोग पूजा करने लगते हैं तब तो जहाँ ये (जैनो में) पूर्वोक्त सब गुण निरतिशय सीम होकर बिराजमान है उनकी पूजा न करना क्या इन्सानियत का कार्य्य है।

(६) पूरा विश्वास है कि अब आप जान गये होंगे कि वैदिक सिद्धान्तियों के साथ जैनों का विरोध का मूल केवल अज्ञो की अज्ञानता है।

(६) मैं आपसे कहाँ तक कहूँ बड़े २ नामी आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में जो जैन मत खण्डन किया है जिसे सुन देख कर हँसी आती है।

(८) मैं आपके सन्मुख आगे चलकर स्यादवाद का रहस्य कहूँगा तब आप अवश्य जान जायेंगे कि वह अभेद किला है, उसके अन्दर वादि, प्रतिवादियों के माया मय गोले प्रवेश नहीं कर सकते परन्तु साथ ही खेद के साथ कहना पड़ता है कि अब जैन मत का बुढ़ापा आगया है अब उसमें इने-गिने ग्रहस्थ विद्वान रह गये हैं।

(९) सज्जनों ! एक दिन वह था कि जैन सम्प्रदाय के आचार्यों की हुँकार से दसों दिशाएँ गून्ज उठती थी।

(१०) सज्जनों ! जैसे काल चक्र ने जैन मत के महत्व को ढाँक दिया है वैसे ही उसके महत्व को जानने वाले लोग भी अब नहीं है।

(११) रजबसा चेसूर की वैरी के बखान:— यह किसी भाषा कवि ने कहा है। सज्जनो ! आप जानते हैं कि मैं उस वैष्णव सम्प्रदाय का आचार्य हूँ। और साथ ही उसकी तरफ कड़ी नजर से देखने वालों का दीत्तक भी हूँ। तो भी भरी मजलिस में मुझे यह कहना सत्य के कारण आवश्यक हुआ है कि जैनों का ग्रन्थ समुदाय सारस्वत महा सागर है उसकी ग्रन्थ संख्या इतनी अधिक है कि उनका सूची-पत्र भी एक निबन्ध हो जायगा। उस पुस्तक समुदाय का लेख और लेख्य कैसा गम्भीर है, युक्ति पूर्ण, भावपूर्ण, विषद और अगाध है इसके विषय में इतना ही कह देना उचित है कि जिन्होंने

इस सारस्वत समुद्र में अपने मतिमन्थान को डाल कर चिर आन्दोलन किया है वे ही जानते हैं।

(१२) तब तो सज्जनों ! आप अवश्य जान गये होंगे कि जैन मत तब से प्रचलित हुआ जब से संसार सृष्टि का आरम्भ हुआ।

(१३) मुझे तो इसमे किसी प्रकार का भी उज्र नहीं है कि जैन दर्शन, वेदान्तादि दर्शनों से पूर्व का है आदि।

इत्यादि २ ऐसे बहुत से प्रमाण हैं परन्तु ग्रन्थ विस्तार भय से अधिक न लिख मै अपनी लेखनी को विश्राम देता हूँ।

इन प्रमाणों से आप महानुभावों को जैन धर्म के महत्व तथा प्राचीनता का बोध होगया होगा अब आगे के लिये इस विश्वोपकारी, विशाल, कल्याणकारी धर्म के पवित्र कुलाकार प्रवृत्ति मार्ग के चलाने वाले गृहस्थ गुरु और कल्याणकारी मोक्ष मार्ग के गाइड धर्म गुरु निग्रन्थों की उत्पत्ति का इतिहास सुनाना अत्यावश्यक समझ वर्णन करता हूँ।

दूसरा अध्याय

[जिसमें हर दो गुरुओं की उत्पत्ति का वर्णन- कथानुयोग से]

आप महाशय जानते हैं कि जैन ग्रन्थों में ज्ञान का अक्षय भण्डार है। उसके ४ भाग किये गये हैं। (१) द्रव्यानुयोग (२) कथानुयोग (३) गणितानुयोग (४) चरणकरणानुयोग।

१. द्रव्यानुयोग उसे कहते हैं जिसको अन्य भाषा में फिलासफी या दर्शन शास्त्र कहते हैं।
२. कथानुयोगः—इसमें महा पुरुषों के जीवन चरित्र हैं।
३. गणितानुयोगः—इसमें गणित ज्योतिष का विषय है।
४. चरणकरणानुयोगः—इसमें चरण सत्तरी व करण सत्तरी का वर्णन है।

इन चारों पर बहुत से सूत्रों व ग्रन्थों की रचना हुई है, उनमें से बहुत तो नष्ट होगए और बहुत से मौजूद हैं। संसार परिवर्तन शील है। सदा काल एकसा नहीं रहता। पहले संसार भोग भूमिका क्रीड़ा क्षेत्र बना हुआ था। विश्व को, अनुपम शान्ति उस काल में अनुभव हो रही थी, याने न तो क्रिया फाण्ड थे, न लेन देन का व्यापार ही था। पाप पुण्य भी नहीं समझते थे। सिर्फ दस जाति के कल्प वृक्ष मनोवांछित फलों का दान देते थे। उससे उनका निर्वाह होता था। वे वृक्षों के नीचे ही निवास करते थे। यह समय युगलकों का था। उसकी सूक्ष्म झांकि कराता हूँ।

इस जगत को जैनी द्रव्यार्थिक नय के मत्तानुसार शाश्वत अर्थात् हमेशा प्रवाह में ऐसा मानते हैं। और दो प्रकार के कालों में समय का भाग करके छः आरों के नाम से विभक्त किया। उपर कहे हुए दो कालों को इस नाम से पुकारते थे। अव सर्पिणी काल, और दूसरे को उत्सर्पिणी काल। इन कालों का मान दस कोटा कोटि सागरो पम का शास्त्रकारों ने माना है। यहां अवसर्पिणी काल के आरों का नाम लिखता हूँ

पहला आरा जिसको सुखमासुखम नाम से पुकारते थे। इसमे मनुष्य भद्रक, सरल स्वभावी, अल्परागी और सुन्दर स्वरूप वाले, निरोग्य शरीर वाले और अपना खाना पानादि सर्व कार्य दस जाति के कल्प वृक्षों से करते थे। उनके सन्तति का यह हाल था कि एक लड़का और लड़की युगलक् रूप में जन्म लेते थे और वह युवावस्था प्राप्त होने, पर गृहस्थ धर्म कर लेते थे। इसी तरह दूसरा आरा जिसको सुखमा-दुःखम के नाम से संबोधन करते थे। तीसरे आरे के अन्तमें एक युगलिया वंश में ७ कुलकर उत्पन्न हुए (अन्य मताव लम्बी इसको मनु के नाम से पुकारते हैं) कुल करों का यह काम होता था कि वह स्थापित मर्यादा बांधे, और लौकिक व्यवहार मे मनुष्यों को चलाते याने (समय के राजा) इसी तरह दूसरे युगलक वंश मे भी ७ कुलकर हुए। सर्व मिला कर १४ कुलकर हुए। १५ वां कुलकर श्री ऋषभदेव माना है। इन पिछले ७ कुलकरों के यह नाम थे।

(१) विमलवाहन (२) चक्षुमान (३) यशस्वान (४) अभिचन्द्र (५) प्रश्रेणी (६) मरुदेव और (७) नाभिराय। इनकी यह महीपियों के यह नाम है (१) चन्द्रयशा (२) चन्द्रकान्ता (३) सुरुपा (४) प्रतिरुपा (५) चक्षुकान्ता (६) श्रीकान्ता (७) मरुदेवी इनका उत्पति स्थान गङ्गा व सिन्ध के मध्य खण्ड में माना गया है। अब तीसरा आरा व्यतीत होने आया, इस जम्बु द्वीपके भरत खण्ड में नाभिराय कुलकर के पट्ट महिषि माता मेरुदेवी के गर्भ में "बारहवे भव मे जो व्रजनाभ नामा चक्रवर्ति का जीव था, वह आषाढ़ कृष्णा ४ के दिन सर्वार्थ

सिद्धि विमान से चव्य होकर स्थिति हुआ। और चैत्र कृष्णा ८ के दिवस उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मे श्री आदि नाथ भगवान का प्रादुर्भाव इस जगत में हुआ, जो श्री ऋषभदेव के नाम से सम्बोधन होते हैं। यहाँ मैं युगलकों की कथा का समर्थन अन्य मतों से भी करता हूँ जैसाकि अहल इस्लाम के धर्म ग्रन्थो में भी दरज है कि सबसे पहले इस जगत में आदम नामी मनुष्य और हव्वा नामक स्त्री पैदा हुए थे। उनके दिन प्रति एक जोड़ा, लड़का व लड़की पैदा होता था। और वो ही स्त्री पुरुष नाता कर लेते थे। आदम और हव्वा का होना इसाई धमाव लम्बी भी मानते हैं"।

श्रीऋषभदेव का जन्मोत्सव करने को धर्म देव लोक से इन्द्र समेत ६४ इन्द्र व ५६ दिग कुमारियां मेरु पर्वत पर आए। 'इनमें रत्न प्रभा पृथ्वी की मोटी तह में निवास करने वाले चमर चन्चा नामा नगरी का चमरेन्द्र और बाली चन्चा नाम नगरी का इन्द्र वलि भी समेत त्रैयस्त्रिंशक (कर्म काण्ड) देवताओं के आए और जन्मोत्सव मनाया। तदनन्तर इन्द्रादि देवता तो अपने २ स्थान पर चले गए और कुछ त्रैयस्त्रिंशक देवताओं को वनिता नामक नगरी में ही रख गए। इसका यह कारण था कि भगवान का विवाह व राज्याभिषेकादि कृत्य कराने थे व जगत में यह संस्कारादि चलाने थे। उन देवताओं की सन्तति से इस जाति की उत्पत्ति है। उस समय में इस जाति के गुरु सन्तानीया नाम से सम्बोधन करने लगे। इस इतिहास को पढ़ने से आधुनिक नवशिक्षित पाश्चात्य विद्या

के पाठितों को यह आश्चर्य युक्त बात मालुम होकर शंका पैदा करेंगे कि देवताओं का पृथ्वी पर आना व उनसे मनुज सन्तति होना असम्भव हैं क्योंकि देवता निर्वीर्य होते हैं। इस शंका के निवारणार्थे जैन मत के शास्त्रों का प्रमाण देता हूँ। कथानुयोग के आधार पर कलि काल सर्वज्ञ श्री मद् हेमचन्द्राचार्य जी महाराज ने वि. सं. ११२० मे त्रिष्टी शिला का पुरुष-चरित्र रचा। उसके तृतीय सर्ग का दूसरा वर्ष जहाँ उर्ध्व-लोक का वर्णन है, 'भुवनपति, व्यन्तर ज्योतिषी और ईशान-देव लोक सुधि के देवता अपने भुवन में रहे वा वलि देवियों के साथ विषय सम्बन्धी अङ्ग से वाहे, वे संकलिष्ट कर्म वाला और तीव्र अनुराग वाला होने से मनुष्यों की तरह काम भोग मे लीन होवे है, और देवांगना के सर्व अङ्ग सम्बन्धी प्रीति को मेलवे है, इसके बाद दो देवलोक के देवता स्पर्श मात्र से, दो देवलोक के देवतारूप देखने मे और दो देवलोक के देवता शब्द श्रवणथी और अनन्त विगेरे चार देवं लोक के देवता मात्र बड़े चिन्तववा से विषय ने सेवन करे। इस प्रकार विषय रस में प्रविचार वाला देवताओं से अनन्त सुख वाला देवता ग्रवे-वकादिक मे है जो विषय सम्बन्धी प्रविचार रहित है" मैंने भी अपनी जाति उत्पत्ति उन्हीं त्रायस्त्रिशंक देवता जो भुवनपति, व्यन्तरादि भुवन में निवास करने वालो से ही होना लिखा है, फिर इसमे शका जैसी कौनसी बात है। इसके सिवाय बाइस समुदाय के पुज्य जवाहिरलालजी ने व्याख्यान दिया, उसका सार लेकर साहित्य प्रेस, अजमेर मे मुद्रित हुआ (व्याख्यान-

सार संग्रह पुस्तकमाला) में सत्य मूर्त्ति श्री हरिश्चन्द्र-तारा के चरित्र मे हरिश्चन्द्र को सूर्य्यवशीय माना है। सूर्य्य देवता होना विश्व विदित है। उनका जो वंश चला तो देवताओ के सन्तान होना भी मानना पड़ेगा।

फिर लिखा है कि देवताओ के स्त्रीये अप्सराएँ होती हैं। इसके सिवाय आप महाशयो को पूर्ण प्रकार से विदित है कि चोबीस ही तीथकरो का जीव देव-लोक से चव्य होकर मनुज सन्तति मे जन्म लिया है और यहाँ पर उनसे सन्तति होना सर्वोपरि मान्य है।

फिर देखियेगा कि रत्न-चूड़ विद्याधरो का राजा, विद्याधर वशी देवता थे। उनके माता पिता और पुत्र कनक-चूड होने का शास्त्रों में वर्णन है। विद्याधर वंश को देवयोनी मे होने का प्रमाण मे अमर-कोप के पहले काण्ड का ११ वाँ श्लोक देता हूँ।

विद्याधराप्सरो यत्त रक्तो गन्धर्व किन्नराः।
पिशाचो गुह्य को सिद्धो भूतौमिदेवयोनयः॥

इसके सिबाय देवता वैक्रेय रूप भी धारण करते हैं, जैसा कि इन्द्र ने भगवान के जन्म स्नात्र के समय पर ५ रूप धारण किये व इन रत्न प्रभव-सूरिजी ने भी औश्या व कोरट नगर के मन्दिर में प्रतिष्ठा समय दो रूप धारण किए देखो औश्या चरित्र व जन्म कल्याण। दूसरा वैदिक मतानुसार प्रमाण, रामायण मे, मनुराजा और शतरूपा रानी ने तप किया उससे प्रसन्न होकर साक्षात् परब्रह्म परमात्मा अपने स्वरूप का

बरदान दिया वैसे ही राजा दशरथ को वरदान दिया उससे श्री रामचन्द्र का अवतार हुआ। इसी तरह श्री मद्भागवत के दशवें स्कन्ध में श्रीऋषभ देवजी की जन्म कथा में वर्णन किया है कि राजा नाभिराय ने पुत्रार्थ कामना से यज्ञ कराया उससे प्रसन्न होकर साक्षात परब्रह्म अपने समान पुत्र होने का बरदान दिया और ऋषभावतार हुआ। जिनसे भरतादि सौ पुत्रों की उत्पत्ति हुई। फिर देखिये रामयण मे किस्किन्धा-काण्ड मे ब्रह्मा से रच्छ राज नामा वानर का होना व सूर्य्यके वीर्यमें सुग्रीव व इन्द्र के वीर्य्य से बाली की उत्पत्ति मानी है। और हनूमानजी को वायु पुत्र माना है। इसके उपरान्त वाल्मिकी कृत रामायण मे बालकाण्ड सर्ग १७ वाँ श्लोक ६ वाँ "ऋषश्च-महात्मन-सिद्ध-विद्याधरो रगा" इनका वानर योनी में जन्म लेना लिखा है। इसके उपरान्त शिव विष्णु के बीच जनकपुर मे धनुष भङ्ग के समय युद्ध हुआ। उसके लिये "हुँकारेण महास्तम्भिस्तोय त्रिलोचन" फिर भी इतिहासो से यह प्रमाणित होता है कि देवता कइ एक राजाओं की सहायता करने को व इसी तरह इन्द्रादिको की सहायता करने के लिए यहाँ के राजाओं का जाना माना है। उसका एक उदाहरण वाल्मीकि रामायण का देता हूँ।

"रावण वरदान से मानी होकर चन्द्रलोक को विजय करने गया" व दशरथ का इन्द्र की मदद के लिए जाना भी लिखा है। गीता के चौथे व दशवें अध्याय मे श्रीकृष्ण भगवान् ने अर्जुन के प्रति आज्ञा फरमाई—

इमम् विवस्वते योगं प्रोक्तवाहनहमव्ययम् ।
विवस्वन्मनवे प्राह मनु रिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥१॥

ग्रहण नहीं कर सकते। तो भरत ने विचार किया कि राजभोग नहीं करते है तथापि प्राण के धारण के लिये अहार तो करेंगे? ऐसा विचार कर ५०० गाडी भरवा कर अहार मँगवाया तो उसके लिये भी भगवान ने निषेध किया कि मुनियों के लिये आधा कर्मी अहार काम का नहीं तब भरत दुःखी हुआ और इन्द्र से पूछा कि अब मे अहार की क्या व्यवस्था कर इन्द्र ने कहा "यह सब अहार सब गुणों में बढ़ चढ़े हुए पुरुषों को दे डालो भरत ने विचार किया कि साधुओं के सिवाय विशेष गुण वाले पुरुष और कौन होगा? अच्छा अब मुझे मालुम हुआ। देश विरति के समान श्रावक विशेषगुणान्तर हैं इसलिये सब उनके अर्पण कर देना चाहिये। भरत राजधानी में आकर सर्व श्रावकों को बुलाकर कहा आप लोग सब सदा भोजन के लिये मेरे घर आया करो और कृषि आदि कार्य में न लगकर स्वाध्याय में निरत रहते हुए निरन्तर अपूर्व ज्ञान को ग्रहण करने में तत्पर रहो। भोजन करने के बाद मेरे पास आकर प्रतिदिन यह कहाँ करो 'जितो भगवान वर्द्धते भी स्व-समान माहन माहन' अर्थात् तुम जीत गये हो भय वृद्धि को प्राप्त होता है इसलिये आत्मागुण को न मारो न मारो' जब भोजन करने वालों की जीयादा वृद्धि हुई होती देख पाकशाला के अध्यक्ष ने निवेदन किया कि इतने भोजन करने वाले आते हैं कि समझ में नहीं आता कि वे श्रावक ही है या नहीं उसपर भरत ने आज्ञादि कि तुम भी तो श्रावक ही हो इसलिये परिक्षा कर भोजन दिया करो तब से भोजन करने वालो से पुछता कि तुम कौन हो वे कहते कि श्रावक, तो पुछता कि श्रावकों के

कितने व्रत है तो वे कहते के १२ व्रत, पांच अणुव्रत और ७ शिक्षाव्रत, तब वह सन्तुष्ट होता और बाद परीक्षा श्रावकों को भरतराज को दिखलाता तब भरत उनकी शुद्धि के लिये उन में कांकणी रत्न से उतरा संग की भाँति तीन रेखायें, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, के चीन्ह स्वरूप करने लगे यहाँ से जीनों पवित की उत्पति हुई और छठे महीने नये २ श्रावकों की परीक्षा की जाकर चीन्हा किये जाते । मन्त्र के पाठ के अन्तमें महा नशक है उसके उच्चारण वार २ करने से संसार में महाना नाम से प्रसिद्ध हो गये वे अपने बालकों को साधुओं के देने लगे । उनमे से कि तनहिस्वेच्छा पूर्वक विरक्त होकर व्रत ग्रहण करने लगे और कितने ही परिषह सहन करने में असमर्थ होकर श्रावक रह गये । कांकणिरत्न से अंकित होने के कारण उन को भोजन मिलने लगा । राजा इस प्रकार भोजन देते थे तो लोग भी जीमाने लगे उनके स्वाध्याय के लिये चक्रवर्ति ने अर्हतो की स्तुति और मुनियों तथा श्रावकों की समाचारी से पवित्र ४ वेद रचे वो पढ़ने लगे वे महाना ब्राह्मण कह लाने लगे कांकणि रत्ना की रेखा के बदले जिनोपवित धारण करने लगे भरत राजा के पश्चात सूर्ययशा गद्दी बैठा उसने सुवर्ण मई जिनो पवित की चाल चलाई और महायशा आदि राजा के समय चांदी की जिनोपवित बादमें सुत्रकी जिनोपवित धारण करने लगे । "सुर्ययशा के बाद महायशा इसके बाद अतिबल व बलभद्र बाद बलवीर्य उसके बाद कीर्ति वीर्य बाद जल वीर्य और उसके बाद दण्डवीर्य ऐसे ८ पुरुषों तक ऐसा ही आचार जारी रहा इन्होंने भी इस भरतार्द्ध राज्य भोगा और इन्द्र के

रचे मुकुट धारण किया । इस इतिहास के पढ़ने पर कितनेक यह शंका करेंगे कि हां वेशक महात्मा (गृहस्थ गुरुओं) की उत्पत्ति शास्त्रों से पाई जाती है लेकिन भगवान सुविधिनाथक चन्द्र प्रभु के कितनेक काल पश्चात् जैन धर्म के चातुर्संघ का विच्छेद होगया था तो वे गृहस्थ गुरु भी बिच्छेद चले गये फिर उत्पति कब से और क्यों हुई " लेकिन यह शंका निर्मूल है क्या माने कि अव्वल तो उस समय चातुर्संग का बिच्छेद जाना पाया नहीं जाता हाँ अलबते अकाल से साधुसाध्वीयों का बिच्छेद जाना अवश्य वर्णन है यह वाक्य तो ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे पुरुष रामजी के इतिहास में प्रसिद्ध है कि इन्होंने २१ वार पृथ्वी को नीक्षत्री कर दी थी यह एक तरह का पण्डितों का गूढ़ रहस्य है इसके प्रमाण में यह ही काफि होगा कि रामायन में धनुष्य यज्ञमें धनुष उठा ने के लिये दश हजार राजाओं का एक ही वार बल करने के बारे में चौपाई दरज है "भूप सहस दस एक ही वारा, लगे उठावन टरे न टारा " इसके साथ ही श्रीरामचन्द्र से संवाद होकर पुरुष राम जी पराजय होकर आशीर्वाद देकर वनमें सिधारे तो फिर पृथ्वी निक्षत्री होती तो यह राजा व रामचन्द्र कौन थे । ऐसा ही इस भयंकर समय में साधु साध्वीयों का विच्छेद हूँ वा उस समय में धर्म की रक्षा इन ही गृहस्थ गुरुओं ने की इसका प्र-माण और न देकर सिर्फ कल्पसुत्र में असंजतीयों की पूजा का पाठ देखो उससे साफ प्रमाणित होगा । असंजतीयों ने (असंजमी जीन्होंने संजम नहीं लिया) उन गृहस्थ गुरुओं ने रक्षा की इसके सिवाय दूसरा प्रमाण गृहस्थ गुरु पूजनीय

होने की साक्षी में कल्प सूत्र साफ साफ साक्षी देता है कि भगवान महावीर माता त्रीषला देवी के गर्भ में आये और माता को स्वप्न हुए उन स्वप्नों को सुनकर राजा सिद्धार्थ ने उन स्वप्नों के फल पूछने के लिये पण्डितो को बुलवाने की आज्ञा दी तो प्रचारक गण क्षत्री कुण्ड के मध्य भाग में होकर जहाँ स्वप्न पाठक जोतिषियों के घर थे वहाँ गये वहाँ से जोतिषी लोग आए तो राजा ने नमस्कार सतकार सन्मान पूजन कर यथोचित आसन पर बैठाये याने पूर्व में भद्रासन लगे थे उन पर बैठाये यहाँ यह शंका कोई करे कि वे जोतिषि अन्य मतावलम्बि होगे तो इसके प्रमाण में यह दलिल काफ़ी होगा के उन जोतिषियों ने राजा को आशीर्वाद श्री पार्श्वनाथ की स्तुति पढ कर दिया फिर राजा के प्रश्न के उत्तर में जोतिषियों ने स्वप्न फल कहा। अब फिर दूसरा प्रमाण इसी कल्प सुत्र के पांचवें व्याख्यान में दरज है वो देता हूँ जो श्रीभगवान महावीर के जन्म के तीसरे दिवस सूर्यचन्द्र दर्शन कराने की विधि होती है "गृहस्थ गुरु (संस्कार कराने वाला विद्वान गृहस्था गुरु जैन ब्राह्मण अर्हन देव की प्रतिमा के सामने स्फटिकर-त्नचांदी की चन्द्रमा की मूर्ति स्थापन कराके प्रतीष्ठा पूजन करके माता और बालक को स्नान कराके अच्छे वस्त्र पहिराकर चन्द्रोदय के समय रात्रि में चन्द्र सन्मुख माता पुत्र को बैठा कर ऐसा मन्त्र पढ़े "ॐचन्द्रोसि, निशाकरो, । नक्षत्र पति रसि, ओषधि गर्भोसि अस्य कुलस्य ऋधि वृद्धि कुरु २ ऐसा बोलकर गृहस्थ गुरु माता व पुत्र को चन्द्र के दर्शन करावे और नमस्कार करावे फिर माता उस बालक को गुरु के पगों लगावे

पीछे गुरु आशीर्वाद देवे । सर्वौषधि मित्र मरि चिराजि: सर्वा-पदासंहरणे प्रवीण: । करोति वृद्धिं सकलेपिवंशे युष्माकमिदुं: मतं प्रसन्न: ॥१॥ चन्द्र दर्शन के बाद सूर्य दर्शन कराते है उसकी विधि । दूसरे दिन प्रभात में सूर्योदय के समय सुवर्ण या तांबे की सूर्य मूर्ति बनवाकर पूर्व की तरह स्थापन कर ग्रहस्थ गुरु इस तरह मन्त्र पढ़े । ॐ अर्हं सूर्योसि, दिन करोसि, त ो पहरोसि, सहस्रकिरणोसि, जगच्च क्षुरसि, प्रसिद्ध अस्य कुलस्य तुष्टिं पुष्टि प्रमोद कुरु २ एसा मन्त्र उच्चारण कर माता व पुत्र को सूर्य दर्शन करावे और माता बालक को गुरु के पगाँ लगावे गुरु आशीर्वाद दे 'सर्व सुग सुर वंद्य: कारयिता सर्व कार्याणाम् मुर्याक्षि जगच्च क्षुमेगलदस्तं सपुत्राय ॥१॥ इस इतिहास से आप की गृहस्थ गुरुओं का पूजनीय पदव उस समय में गृहस्थ गुरुओं का होना प्रमाणित होगा । इसके सिवाय कल्प सूत्र टिका वाल व बोध नामी राजेन्द्र सूरिकृत के पेज २०० में इस जाति की उत्पत्ति का समर्थन इस प्रकार किया है । हवे एक दिवसे भगवान अष्टापद पर्वत उपर समोसरा तेवारे भरत महाराजा ये विचार स्यु २ जे बिजुं तो म्हारा थी कांइ थतोन 'थो पण आसर्वे साधुओं ने "६६ भाइयो ने दीक्षा ली वे) अहार बोहरा उतो लाभ पामुतेवारे एवो जाणी ५०० गाडा सुखडी नाभरी लाव्यो अने भगवान ने कइ चाला गोस्वामीजी आज ना दवसे आसर्वे साधुउने अहार करावबानु हुकम म्हारे घेर थइ जाय तो गणो जरुढो थाये तेवारे भगवान ने कहों आधा कर्मिक राज्य पिड साधुओंने लेवु कल्पे नहीं वलि सन्मुख अहार लइ आव्युते माठे साधुओं लीधो नहीं एवु जोइ भरत राजा

ए जाणो जेहुँ तो सर्व प्रकारे भक्ति रहित थयोए वो सोचकर वालाग्योते जोइ इन्द्र महाराज ने भरत को कहा कि तुम्हारे से अधिक गुणवाले होय तेने यह अहार जमाडो पछी भरतेपण ते अहार, श्रावको ने जमाडो इटाथी ब्रह्म भोजन चालु थयो । हवे भरत राजा सदा सर्वदा श्रावको ने जमाडे छेकेटलाकका लपछी जेवारे घणा जमनाथयाते वारे परीक्षा करीने सर्व ने सेलाणीना कांगणी रत्न नीज नोइ अपीत था देवगुरु अने धर्म रूपी त्रण तत्व सम्बन्धी त्रण रेखा प्रत्येक श्रावक ने करी ती हाथी जनोइ आपवानी चाल पड़ी इहा ऋषभदेव की स्तुति का ४ वंद थया भरत के पाटे आदित्ययशा ने सोने की जनऊ करी ने एमज जमाडो एमज आठ पाट लगे श्रावक जमाडा इस इतिहाससे भी पूर्व लिखा इतिहास का समर्थन होता है। आगे १६ सस्कारों के कराने बाबत आपको मालूम होगा कि सस्कार कराना कितना जरूरी है जिसको तीर्थ करोतक को धारण करना पड़ा जैसा कि समस्थ परम थे के जानकार श्रीभगवान अर्हतमी गर्भ से लेकर राज्यभिषेकादि परयन्त संस्कारों को अपने देहमे धारण करते हुए तथा देश विरति रूप गृहस्थ धर्म में प्रतिभाव व्रह सम्यकत्वारोपण रूप आचार आचर्ण करते हुए तथा निमेश मात्र शुल्क ध्यान करके प्राप्य केवल ज्ञान के वास्ते दीर्घ काल तक यति मुद्रातपः चरणादि धारण करते हुए तथा केवल ज्ञान होने बाद पर की उपेक्षा करके रहित चिदानन्द रूप भगवान समव सरण में विराजकर धर्म देशना, गणधर स्थापना और संसयछ्य व च्छेद तथा देवादिकों के किये हुए छत्र चाम रादि अति शययुक्त सिंहासन पर विराज कर सर्व को आचार में

चलने का उपदेश दिया भगवान के निर्वाण बाद इन्द्रादि देवता ओं ने अन्तेष्टिक्रिया की वगैरा अर्हन के मत में लोकोत्तर पुरुषों को आचार ही मुख्य प्रमाण है यहां तक क रामायण मे देखिये दशरथ रामचन्द्रादिको ने अपने कुलगुरु वशिष्ट इस्लाम धर्म में भी निकाह, खतनादि सस्कार अपने गुरुओं से हां काकै सा सन्मान किया कराना होता है ऐसे ही अग्रज भी शादि आदि संस्कार अपने गुरुओ से कराते है पर बड़े पश्चाताप का मुकाम है कि हमारे जैन भाई आधुनी ममय मे देवगुरु आज्ञा उल्लंघन कर अपने यहाँ सस्कार कर्म अन्यमतावलम्बियों के हाथ से कराना सिद्ध किया है उसका कुफल उठाते हुए भी सचेतन होते यह कहाँ तक शोभनीय है लेकिन यह गृहस्थ गुरुओ को भूल जाने का कारण है । इसमें कोई महाशय यह भी शंका पैदा करेगा कि भगवान आदि नाथ ने सर्व हक्क महाणों को ही सोंप दिया तो निग्रन्थ साधुओ को मान्यता का तो कोई हक ही नहीं रहा, नहीं नहीं ऐसा न समझिये आप जरा सोचे कि संसार मे दो तरह के धर्म प्रवर्तमान है उसमें पहले भगवान ने प्रवर्ति मार्ग कायमकर उसके यावत कार्य्य है उन पर इस जाति का हक कायमा किया और जब भगवान ने कल्पानकारी दिक्षा धारण कर मोक्ष मार्ग का रास्ता बताया उस पर उपदेशक साधु मुनि निग्रन्थों का हक कायम किया याने इन दोनों मार्गों को चलाने का उपदेशक गृहस्थ गुरु व निग्रन्थ गुरुओं को कायम किये यहा आप सोचो कि संसारी कार्यो से कहीं ऊँचा मोक्ष मार्ग निवृत्ति मार्ग है इसलिये निवृति मार्ग दर्शक निग्रन्थ गुरुजीयादा सन्मान योग्य माने

गये वरना दोनों प्रकार के गुरु आदि नाथ के समय से चले आते है और अपने २ मार्ग में पुज्य है । इस इतिहास को त्रिष्टीशला का पुरुष चरित्र नामी ग्रन्थ जो कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यजी महाराज ने विक्रम सं. १२२० में राजा कुमार पाल के अनुरोध से रचा है उसको देखिये उसमें इसी माफिक उत्पति इस जाति की होना व पुज्यता व महत्वता का वर्णन मिलेगा इसके सिवाय श्री मद वर्द्धमान सूरि कृत आचार दिन कर निग्रन्थ के २४ स्तम्भ उपनयन संस्कार विधि को देखिये उसमें भी जैन ब्राह्मण माहण की उत्पत्ति का प्रकाशन पड़ेगा भारद्वाज गौत्रिय, चन्द्रगच्छ नेणवाल अवटंकिय, महात्मा महाशय अपने आचार्य धनेश्वर सूरिजी महाराज जो गुप्त संवत ४७४ में वहलभीपुर के महाराज धिराज श्री शिलादीत्य जिनका नाम हाल की फहरिस्त में इतिहास वेता ध्रुव भट से सम्बोधन करते है उनके गुरुपद पर आरूढ़ होनेका इतिहास इस तरह देते है । और इनका इस संवत में विद्यमान होने के प्रमाण में एक दोहा भी प्रसिद्ध है । "संवत चार चौमोत्तरे हुआ धनेश्वर सूर । शत्रु जयमहातमरचा शिला दित्य हजुर ॥ " इनका इस संवयत में होने के विषय मे महामहोपाध्याय राय बहादुर पंडित गौरीशंकरजी ओझा अपने रचीत इतिहास मे इस तरह शंका करते है । "धनेश्वर सूरि ने शत्रुंजयमहातम बनाया था जिसमें वह अपने को वह ल्भीक राजा शिला दित्यका गुरु बतलाता है शिला दित्य४७७ होना मानता है,परन्तु वास्तवमें यह पुस्तक विक्रम संवत की तेहरवी शताब्दी या उसके पीछे को बनी होना चाहिये क्योंकि उसमें राजा कुमारपाल का जीकर है ।

जो विक्रम सम्वत ११६६ से १२३० तक राज्य किया था । इसलिये धनेश्वर सूरि का कथन विश्वास योग्य नहीं" सो यह विचार उक्त पण्डितजी का भ्रम सूचक है क्योंकि शन्त्रजय महात्म्य मे साफ वर्णन है कि श्रीभगवान महावीर इन्द्र प्रती भविष्य वाणी फरमाइ के "विक्रमा दीत्य पीछे ४७७ वर्षे धर्म की वृद्धि करने वाला शिला दीत्य राजा थशेत्थार केडे आ जैन शाशन की अन्दर (पाटणनी गादी) कुमारपाल, वाहड़, वस्तुपाल अने शमरा शाह वगेरह प्रभाविक पुरुष थशे" इसी भविष्य वाणी का इस ग्रन्थ में उक्त भटारक ने वर्णन दर्ज किया है न के कुमारपाल के राज समय में बनाया देखो शन्त्रुजय महातम पेज ११३ पार्श्वनाथ चरित्र । इस वाणी को जैन समाज कदापि मिथ्यान मान सकेगा आज भी भविष्य वाणी जोतषियों पर जनता विश्वास करती है फिर भगवान के वल्पज्ञनी की वाणि कैसे मिथ्या हो सके । पण्डितजी महाराज आपने जो राजस्थान इतिहास वडे परिश्रम व सोध, खोज, के साथ बनाया इसके लिए हम आपको अनेक धन्यवाद देते है । लेकिन फिर भी संसार में सर्व प्रकार के लोग वसते है उन सबो की मति समान नही होती जैसे कि विश्वेश्वर नाथजी रेहु ने तुलसी सम्वत ३०१ वेसाख मास की माधुरी में आप पर आक्षेप कीया वो दरज है उससे तो श्रीमान परिचित होवे हीं गे । आगे मैं छठे शिला दीत्य का संवत ४७४ में होने के प्रमाण आधुनिक इतिहासों से होता है वो देता हूं । यह सं. ४७४ वलभी सं० जो विक्रम सम्वत ७१८ में होने का अनुमान होता है । क्यों कि आखरी शिला दीत्य राजा का दान पत्र सबसे पिछले ४६६

का लिखा हुआ पाया है और विक्रम सम्वत से २४१ वर्ष बाद बल्लभी सम्वत का चलना इतिहास वेताओं ने माना है। डाक्टर जी बुलर ने एक और नये पत्र से मालुम किया कि छठे शिला दीत्य जो हाल की फहरिस्त में ध्रुव भट के नाम से कहलाया जाता है। इसी तरह एम. यू. जैनी जेकट ने सन १६३६ इस्वी विक्रम सम्वत १८६३ में यह बयान किया है कि चीनी यात्रि हुएन्तसग भी इस राजा को इसी नाम से जाना ताथा जज की उसने ६३९ इ० वि० स० ६९६ हिज्री १८ के थोडे समय पीछे उक्त राजा से मुलाकात की थी, देखो वीर विनोद नामी बृहत इतिहास मेवाड़ आगे मै शत्रुञ्जय महातम का संक्षेप वर्णन करता हूं इस ग्रन्थ को पहले श्री युगादि भगवान की आज्ञा से पुण्डरिक नामा गणधर ने जगत कल्याणार्थ देवताओं से सत्कार पाया हुआ सवालक्ष श्लोक में रचा उसके पश्चात श्री महावीर स्वामि के पन्चम गणधर सुधर्मी स्वामि जो आधुनिक निग्रन्थ सम्प्रदाय के अधीनायक थे। उन्होंने संक्षिप्त रुपसे चोइस हजार श्लोक का बनाया इसके पीछे १८ राजाओं का अधिनायक सोराष्ट्र देशके महाराजा ने शत्रुजय का उद्धार किया वो शिला दीत्य छठे के आग्रह से (सर्व अंगो सहित योग मार्ग को सम्पूर्ण जानने वाले स्याद् वादमें बडे २ बौधो का मद उतारने वाले बिशाल भोग छता उसकी इच्छा का तदन त्याग करने वाले शुद्ध चारित्र से निर्मल अङ्गवाला अनेक प्रकार की लब्धियों से युक्त वैराग्य के समुद्र, सर्व विद्याओं में निपूर्ण और राज गच्छ के धारण करने वाले महात्मा श्रीधनेश्वर सूरि, ने प्राचीन ग्रन्थों में से सार भूत लेकर शत्रुजय महात्म

यो थारो लडको मारे चेलो ठीकाणा का हकदार वास्ते लीदो सो मारा ठीकाणा रो मालक यो लडको है, मै मारी राजी खुशी से रखा, इबाबत माहे कोई भाइ गोत्यो दखल करवा पावे नही, इसमज मुतफा दस्तावेज तो लडका का वारीस को करदे, और मुनासिब से नालेर वांटे और वीनको रखना जाहिर करदे यो लडको भटारकजी रे चेलो वे चुको जिस दिन जात बीरदरी का कोई भटारक जी के नाम कागज लीखे जिसमें वीन लडके को शिष्य करके नाम देवे चेलो राख्या बाद मुनामीब जाण दीक्षा का मुमहोरत विचार के गनपति स्थापन करे, जीतना विवाह का सामान होवे जीतना करे तब दीक्षा का मुमहोरत का दिन आवे जिस दिन वीन का पाग अगर चक होवे सो उतार लेवे पीछे उनको गुरु होवे सो गुरु मन्त्र सुणावे जीदन श्री'''जीमाहे सुदु सालो आवे सो ओढावे जोदन सु पछेवडी धारणा करे और जीस रोज से श्री'''जी में आशीर्वाद दे, वोनकी वैठक पर साबीत होजावे, इतनी वीधान करा पेली श्री'''जी में आशीर्वाद देणो गेर मुनामीब है और जीदन दीक्षा मिल जावे जीदिन सुमीखा-वट माहे आचार्यज जी करके नाम लिख्यो जावे जब वो चेलो भटारकजी गेर हाजर हुवा ठिकाणा रो हकदार होवे कदाचत भटारकजी गेर हाजर हुवा बाद चेला को गादी वैठावे जीरी विगत—

अवल तो मेवाड मालवो आमद अणाती नही देसा माहे भटारकजी रा दोई ठीकाणा है, खुद उदेपुर मध्ये सो अलग २ गच्छ रा है एक तो नेणावाल गच्छ, दुसरा कँवला गच्छ रा है दोनो ही का कुरब कारण रा हजुरजादभेट तीन ही देसा माहे

हाल चालु है तब जेगच्छ रा भटारक गेर हाजीर होवे जी गच्छ में न गीच लागती रो लडको होवे जीने बैठावे नगीच नहीं मीले तो दुरा गच्छ माहे तलास करे सायद गच्छ माहे भी योग नहीं बणे तो हमारी जात ८४ गच्छ हे जी माहे सु तलासी करके रखे, कदाचीत बादी जात माहे पोयोग नहीं बणे तो ब्राह्मण का लड़का ने लेर कायम भटारक जी होवे जारा हाथ सु बीरी दीक्षा का विधान करे पछे श्री'''जी माहे सु दुमालो आवे एक पछेवडी सहेर का समस्त पंचा की तरफ सु आवे पछेवड़ी धुमधाम सु गाजीत्र बाजीत्र सु थोबकी बाड़ी ले जावे उठे गुरु मन्त्र सुणावे अठासु पालकी माहे बैठाय पाछा पोसाल माहे लाय गादी ऊपर स्थापन करे, जीदिन सु वे भटारक जी कह लावे, इम मुजीब यो सुरत से हमारे चेला गादी का हकदार होता है फकत्

भटारक वरदमानजी ग्राम चकारडे पर लोकन्तास हुवा बारे हाथ सु चेलो नहीं मुडो जी पर वि. सं १९२२ में महाराणाजी श्रीशम्भुसिंगजी के समय में दरियाफत हुई जद या हकीकत मालूम कराई लेखक का पिता खेमराजजी बीयाददास्त सुन कर की मालुम वेवा पर छोटी पोसाल कंवल गच्छ की हेवी पर भटारक देव राजेन्द्र सुरिजी जो नेणाबाल गच्छी महात्मा मयो-चन्द जी का पुत्र थे वे गादी पर कायम हावारे चेला किस्तूर-चन्दजी नाम का था वाने इगादी पर मुकरिर कर किशोर राजेन्द्र सूरिजी नाम दिया को राख्यो इरो दाखला लोपट दर्शनों का दारोगा भट रामशंकरजी का दफतर में है।

(नकल ताम्रपत्र)

अङ्कुस । स्वस्ति श्री उदेपुर सुथाने महाराजाधिराज माहाराणा श्री भीमसिंहजी आदेशातु भटारक रामचन्द्र कस्य अप्र । उदयपुर मुकनपुरा मे समस्त महाजन सोनी कछारों रे चॅवरी १ प्रत रुपयो १) एक थाहे दीदा जावेगा आगे परवानो महाराणा श्री बड़ा जगतसिंहजी री सही रो संवत् १६८५ रा जेठ सुद १५ भोमे रा दसवासरो सो फाट गयो जणी परवाणे यो परवानो है सो पाया जावेगा । चवरी एक प्रत १) चलण रो पाया जासी दूवे श्रीमुख । संवत् १८५७ वर्षे काति विद ६ रवे उ ।

भटारक किशोररायजी के शिष्य मोहनलालजी सांडेर गच्छ के रक्खे गये उसकी दीक्षा वि० सं० १९७१ दूती वैशाख सुद ६ को महोरथ था उस मौके पर नीशाण, हाथी, विरादडी मय करनाला के भेजने तावे राज श्री महक्मेखास से जरिये हुकम आदी ओल राणावत इन्द्रसिंहजी दारोगा महक्मे फौज के नाम लिखा गया (राणावत इन्द्रसिंहजी) भटारक किशोररायजी के चेला मोहनलालजी के दीक्षा को महोरथ दूती वैसाख सुद ६ को है सो नीसाण, करनाला, हाथी, विराडडी आगे याके काम पड्यो वे और भेजा गया वे, जीं माफिक अब भी कराय दोगा । संवत् १९७१ का दूती वैसाख सुदी ८ ता० २२-५-१९१५ ई० द० कामवाला

दीक्षा होने पर थारो नाम प्रतापराजेन्द्रसूरिजी दीधो । दीक्षा होने बाद वैशाख सुदी १२ सं० ७१ को इस व्यक्ति के मकान पर पदरावणी हुई उस मौके पर महक्मे फौज के हाकिम के नाम दरख्वास्त वास्ते भिजाने निसाण मय करनालों व हाथी वीरादडी के दी गई । उस पर महक्मे फौज से जरिए रिपोर्ट मवरखा वैशाख सुदी १२ सं० ७१ राज श्री महक्मेखास में वास्ते हुकम मुनासिब के भेज दरज किया के सं० १९२२ का साल का पना यहाँ

पर दफ्तर नहीं होने से नहीं लगा; उस पर भट्ट रामशङ्करजी दरोगा षट्-दर्शन से दरियाफ्त हुआ। उसके जबाव में भट्टजी मोसुफ रिपोर्ट सवरखा दुती वैशाख सुदी १२ सं० १९७१ वि० बवापसी गुजारिश होके सं० १९२२ का वैशाख विद ८ के दिन गुरांजी खेमराजजी के भट्टारकजी की पधरावणी हुई सो हाथी व निशाण पहुँच्यो है वाजे रहे। उस पर राज श्री महक्मा खास से महक्मा फौज में हुक्म हुवो। पहला मुआफिक बन्दोवस्त करा देवे। सं० १९७१ का वैशाख सुदी १२ ता० २६ ५-१९१५ ई०

(द० काम करवा वाला का)

फिर दुबारा वि० सं० १९७८ का श्रावण विद ४ को पधरावणी हुई जिस मौके पर महक्मे फौज से जरिए चिट्ठी नं० ९ निशाण वगैरह व हाथी ताबे जरिए नं० १० आई।

भट्टारक किशोर राजेन्द्रसूरिजी का शरीर अस्वस्थ रहने से उन्होंने महाराणाजी श्री सर फतहसिंहजी के चरणों में निवेदन पत्री लिख मारफत बड़ा पुरोहित अमरनाथजी के आसोज विद १२ बुधवार के दिन नजर कराई। "मारी ऊमर ७५ साल की है और हाल में सारे बीमारी है और शरीर जो नाशवान है जीसु चरणारविन्दा में अरज है कि प्रतापराय ने शुभचिन्तक चेलो राख सं० १९७१ मे दीक्षा दीधी। अब या ठिकाणो व चेलो श्री चरणारविन्दा मे मेलू हूं सो धणी पालन करेगा।"

पहलाँ ई ठिकाणा का भट्टारक उदयचन्द्रसूरिजी का परलोक वास रामसेण इलाका मारवाड़ में हुआ। और भट्टारक वर्धमानसूरिजी का परलोकवास ग्राम चिकारड़ा मे हुआ। इस लिए उनकी अन्त्येष्टि क्रिया का वर्णन ठिकाना में न मिलवा सुं भट्टारक किशोर राजेन्द्रसूरिजी का परलोकवास वि० सं० १९८५ का आसोज शुक्ला ४ हुआ। उस दिन षट्दर्शनों का दारोगा को इत्तिला कराई तो स्वयं भट्टजी रामशङ्करजी पोशाले आया और कही के, चालचलावा को खर्चो तो ठिकाना

पहुँचेगा सो करज्यो। या कह कर अर्जी से मालूम करवा महलों में गया, और मालूम कीवी। जिस पर हुक्म हुओ के डोल, लवाजमो पहले हुओ वे ना मुआफिक काम करे, सरकारी तरफ सु नहीं कियो जावेगा। ई वास्ते चेला प्रतापरायजी खर्चा को बन्दोबस्त कीवो। डोल वणायो जिस पर रुपहरी आशावरी लगाई और चारों कोनों पर छतरी के चार तुर्रे और ऊपर एक तुर्रा इस प्रकार पाँच तुर्रा रुपहरी लगाया डोल के अन्दर सफेद मलमल मंडाइ गई। डोल में गादी मोडा रक्खा गया। डोल पर मोका मोका पर और कानों पर लाल टूल लपेट कोर लगेटी गई। भट्टारकजी का शरीर पर चादर पछेवड़ी, सराना पर दुशाला ओढ़ाया और डोल में पधराया। नोकरवाली हाथ में दी गई। मुंहपत्ति घुटने पर रक्खी। ओघा पास में रक्खा। पोशाल से जगदीश का चौक में होकर, सदर कोतवाली व बड़े बाजार के रास्ते से गंगोद्भव व आहड़ के पास पहुँचे, साथ में लवाजमो व ज्योति लालटेन में रक्खी हुई बराबर साथ थी, चवर उड़ाते गये। साथ में दो पुलिस के व्यक्ति थे। गंगोद्भव पहुँच कर श्री जी भट्टारकदेव राजेन्द्रसूरिजी की छतरी के पास चुणाई थी उनमें प्रवेश कराने के पहले नवांग पूजन की गई, फिर रथी में पधराकर आरती करने के बाद, अग्नि संस्कार नेणावाल श्रीलालजी जो रतनजी के वंशज उनके नजदीक रिश्ता में होने से उनके हाथ से सब कृत्य किया गया और प्रतापरायजी पोशाल पर ही रहे।

अन्तिम संस्कार में प्रसिद्ध २ ओसवाल महानुभाव, ब्राह्मण, पड़ौसी व महात्मा बन्धु वगैरह अच्छी तादाद में थे। भट्टारकजी को दाह संस्कार कराने ले गये। पीछे से ठिकाने पर बन्दोबस्त करने के लिए भट्टजी राम-शंकरजी व कामदार हिसाब दफ्तर दौलतसिंहजी पंचोली व चौकी का सर्दार स्वरूपसिंहजी शक्तावत, पुलिस का नारायणलालजी आमेटा सहित आये, और जरुरी सामान बाहर निकलवा कर मकानों पर चिट लगाये, डोल खर्च वगैरह में १२६।)॥ रुपये का खर्च ठिकाने का हुआ; डोल के साथ मे

पुलिस का आदमी भेजने व कोई रोक टोक न करने के लिये, भट्टजी के नाम लिखा उस मुआफक इन्तजाम होगया।

किशोर राजेन्द्रसूरिजी के पाट भट्टारक प्रताप राजेन्द्रसूरिजी को नियुक्त किये, जिस बारे में भट्टजी रामशङ्करजी पट् दर्शना का दारोगा के नाम, राज श्री महक्मा खास का रुक्का नं० ३३४१३ ता० १७-११-२८ मृगसिर शुक्ला ५ सं० १९८५—

सिद्धश्री भट्टजी श्री रामशंकरजी जोग राज श्री महक्मा लि० अपरंच रिपोर्ट राज नं० ६७ कार्तिक शुक्ला १२ संवत् हाल लिखी जावे है कि जगदीश के चोक के मुत्तशिल बड़ी पोशाल है, वहाँ के भट्टारक किशोर-रायजी, आसोज सुदी ४ संवत् हाल फोत हुआ वाके पीछे स्थान पर मुकर्रिर होने के सिलसिले में दरियाफ्त से इनके मुंडित शिष्य प्रतापरायजी जाहिर आया, तथा प्रतापरायजी का चालचलन अच्छा होने की १४ शख्स महाजनान वगैरह ने तस्दीक की है, और राज की रिपोर्ट इन्हीं प्रताप-रायजी जो ३२ वर्ष की उम्र का होकर पूर्व जन्म से महात्मा होना जाहिर आया है, इसलिए उनकी मंजूरी बाबत भट्टारक किशोररायजी के बजाय उनका शिष्य प्रतापरायजी को मुकर्रिर किया गया है, सो इनसे नेकचलन वगैरह का इकरार लिखवाने की हस्ब सरिश्ते कार्यवाही कर रिपोर्ट करे, ताके स्थान पर जो इन्तजाम है वो बरखास्तगी की कार्यवाही की जावे।

प० धर्मनारायणजी

(नकल इकरारनामा)

स्टाम्प नं० १३८३४ पोष शुक्ला १० सं० १९८५

लिखता भट्टारक प्रतापराजेन्द्रसूरि सा० शहर बड़ी पोशाल अप्रञ्च। इस पोशाल पर मेरे गुरुजी के पीछे श्री जी ने मुझे मुकर्रिर फरमाया सो मारा जैन ठिकाना की आगली मर्यादा है याने नागा ठिकानेदारों की जो

मर्यादा है उस मुजिब में भी बराबर चलूंगा, किसी प्रकार से बेजा चलूंगा नहीं, ठिकाने को आबाद रक्खूंगा, ठिकाने के बाहने जो जायदाद है उसको खुर्द बुर्द नहीं करूंगा और पोशाल की मान मर्यादा बराबर रक्खूंगा, शिष्य मेरी जाति सिवाय अन्य को नहीं रक्खूंगा, और गृहस्थाश्रम के रिश्तेदार यदि मेरे पास आवेंगे तो मुसाफिरान के तौर से रक्खूंगा, इस इकरार के अलावा चालूं नहीं, और किसी तरह से चलना साबित हो जाय तो सरकार से हुक्म होगा तामील करूंगा, यह इकरारनामा मैंने अपनी खुशी रंगियत व अक्ल होशियारी से लिख दिया सो साबित है। संवत १९८४ का पौष शुक्ला १३ द० भट्टारक प्रतापराजेन्द्रसूरि

साख १ पाणेरो अर्जुनलाल की भट्टारकजी प्रतापराजेन्द्रसूरिजी के कहने से द० अर्जुनलाल

साख १ रुघनाथसिंह चमेसरा. साख १ गणेशलाल सुराणा

साख १ जोशी नाथूलाल ब० प० की भट्टारकजी के कहने से दी

स्वीकृति भट्टारक प्रताप राजेन्द्रसूरि गुरु किशोर राजेन्द्रसूरिजी उपरोक्त सही। उक्त पद कर स्वीकृति दी है प्रताप राजेन्द्रसूरि।

पहले ३) रु० माहवार और पक्का पेटिया रोजाना मिलता था उसके बदले महाराणाजी श्री सज्जनसिंहजी के राज समय रियासत के खर्च का बजट कायम हुआ, जिसमें धर्म सभा तालुके ८) रु० माहवार करा बढ़ाये और भट्टारक प्रताप राजेन्द्रसूरिजी ने बराबर मिलते रहने वास्ते धर्मसभा में राज श्री महक्मे खास से जरिए हुक्म नं० ४५६३६ पौष शुक्ला १३ हिसाब दफ्तर में रुको लिख्यो गयो जिसकी नकल तामीलन धर्मसभा में भेजी गई।

श्री बड़ा हजूर महाराणाजी श्री फतहसिंहजी वैकुण्ठ पधारे और हाल श्री जी गादी विराजमान हुवे सो आशीर्वाद देवा वि० सं० १९८६

का ज्येष्ठ सुदी ६ साढे आठ बजे महलों गये। भट्टजी रामशंकरजी को कहलाया के आशीर्वाद देवा तात्रे उपस्थित होने के लिये अर्ज कर जवाब देवावे; जिस पर भट्टजी ने कहलाया के हाल में कुर्सी में विराजे है सो गादी पर विराजवो वेगा जब आशीर्वाद वेगा। फिर दुबारा अर्ज कराई तो आज्ञा मिली के ज्येष्ठ शुक्ला ६ सोमवार के दिन सुबह ६ बजे आवें। सो भट्टजी ने कहलाया कि आज नौ बजे महलों आ जावें और पांडेजी की ओवरी बैठ जावे। आज्ञा मुआफिक ८॥ बजे रवाना होकर महला गया और पांडेजी की ओवरी आसन बिछा कर बिठाये। सवा नौ बजे पासवानजी का मन्दिर का महन्तजी आया फिर १। बजे लादुवास का आयसजी आया। बाद में भट्टजी तीनों को ही श्री जी मे ले गये। स्वरूप-चौपाड़ में श्री जी को विराजवो हो उठे गया। श्री जी की गादी सामने, दो हाथ की दूरा से आयसजी रो आसन, इसके दाहिनी तरफ भट्टारकजी का आसन और पास में पासवानजी का मन्दिर का महन्तजी विना आसन बैठा। सिर्फ जाजम पर पाच हाथ की दूरी पर। बाद ५ मिनिट के सीख करी। श्री जी ने जाता आवतां ऊठ ताजीम दी।

आजीविका पर बन्दोबस्त था वो बरखास्त करवा तावे जरिए हुकम नं० २७२६४ सं० १९८७ भाद्रपद शुक्ला १५ ता० ७-८-१९३० ई० गिरवा, कपासन, चित्तौड़ व देवस्थान में लिखा गया।

छोटी पोसाल का देरासर में प्रतिमाजी थे उनको बडी पोसाल पधराने और लवाजमा के लिए हुकम नं० ७८४३१ वै० कृ० १४ सं० १९९२ हुआ। प्रतिमा पूजन विधि की है इसलिए हाथी के बजाय मियानो करा दियो जावे, बाकी फराशखाना से जाजमा २, कनात १, छायावान १ और कोतल में चालवा तावे घोड़ा १, हाथी, बिरादडी,

निमाण मय करनाला के आये । भट्टारकजी मूर्तियों के साथ पधारों की वाड़ी मन्दिर में पधराने के लिये पधारिया उनके साथ आये । मन्दिर की पूजा करने वास्ते पुजारी दो के प्रति नाम रु० ४१) इकतालीस तनख्वाह मिलती थी, वार्षिक वे ८२) रु० भट्टारकजी हस्ते मिलवा को हुकम नं० ४६८७६ पौष शुक्ला १२ सं० १६६० हुआ ।

इसी नेणावाल अग्रदर्शी भारद्वाज गोत्री को निर्ग्रंथ ठिकाना "आचार्य पद" का भिणाय इलाका अजमेर में है जिसका वर्णन—

उदयपुर भट्टारक गम्भनसूरिजी का दूसरा शिष्य जयवन्तसूरिजी भिणाय जिला अजमेर में "आचार्य पद" की गादी स्थापित कर विराजे । इनके शिष्य लक्ष्मीचन्द्रजी, हँसराजजी, ठाकुरसीजी, मेघराजजी, कल्याणरायजी, गोदामजी, कुशालचन्द्रजी, हेमराजजी, श्रीचन्द्रसूरि, अनोपचन्द्रसूरि, गुलाबचन्द्रजी, हरकचन्द्रजी, शिवचन्द्रजी, धनरूपचन्द्रजी, विजयचन्द्रजी हाल विद्यमान हैं । (ठिकाने के साथ जीविका व लवाजमा की सनदों की नकलें वहाँ से नहीं आई जिससे अङ्कित नहीं की ।)

भट्टारकजी उदयपुर से वाहर पधारे उसकी रीति भट्टारकजी किशोर राजेन्द्रसूरिजी गाँव सरदारगढ़ उपाध्यायज्ञानजी ओसवाला के द्वादसा पर पधारे । लवाजमा छड़ी, चामर, गोटा, मेघाडम्बर, मियाना क सहित । इसी तरह गाँव केलवा वाणारस मयाचन्दजी का द्वादसा में वि० सं० १६७४ में पधारे वहाँ भी उपरोक्त लवाजमा साथ में था ।

भट्टारक प्रताप राजेन्द्रसूरिजी विक्रम सं० १६६४ के माघ शुक्ला १२ को शाम की गाड़ी से आमेट पहुँच कर मियाने में विराज

कर रात का समय होने से आमेट बाहर अखाड़े में बिराजे और प्रातःकाल ठिकाने आमेट से रावतजी गोविन्दसिंहजी की तरफ से घोड़े २ चाँदी के साज के कोतल में रखने के लिये व छड़ी १ चाँदी की। ठिकाने की छड़ी मय छड़ीदार हरलाल व १० जवान पुलिस मियानो, नक्कारखाना, मय नक्कारचियों के व बैंड के भिजवाये।

ग्राम आमेट के समस्त महाजन ओसवाल पंच छोटी बड़ा तड़ के व यजमान माद्रेचा, वोहरा और महात्मा जाति के समस्त दर्शनीय अखाड़े पर आये। वहाँ पंच ओसवालों की तरफ से भेंट कर दुशाला ओढ़ाया। बाद पंचान को मागलिक श्रवण करा फिर मियाने में बिराजमान कर छड़ी, चामर, गोटा, चपरास वगैरह कुल लवाजमा ठिकाने के सहित सर्व पंचान के जय-घोष करते हुवे आमेट ग्राम में सरे बाजार होते हुवे पधारे। बाजार में दुकानदार महाजन वोहरा वगैरह खड़े होकर वन्दना करते रहे और सत्यनारायण के पास जलूस सहित का फोटो लिया गया। रास्ते मे जैन मन्दिर जी के दर्शन कर भेंट करते हुवे श्री जैसिंहश्यामजी के मन्दिर दर्शन भेंट कर के परिडत गुलाबचन्द्रजी कनरसा अवटंकी अग्नि वैश्यायन गौत्र के पोसाल पधारे। वहाँ पंडित रतनलालजी की पोशाल से पं० गुलाब-चन्द्रजी की पोशाल तक पगमंडे पर होकर पोशाल के बाहर दरीखाने (जाजम, पछेवडा, गादी मोड़ा लगा हुआ था उस पर विराजे। गुलाबचन्दजी की तरफ से २५) रु० व दुशाला नजर हुआ और चरण-प्रक्षालन व नवांग-पूजा गुलाबचन्दजी ने की और दो २) रु० न्योछावर के किये। लवा-जमा वालों को पारितोषिक देकर बिदा किये, फिर पात्या हुआ सो जीमण जीम वहाँ से कोठारी मोड़ीलालजी के बंगले निवास-स्थान पर पधारे। शाम को फिर पांत्या हुआ और जीमे। वहाँ फिर

चन्द्र योगे । श्री सांडेर गच्छे कलिकाल गोतमावतार समस्त भविक-जनमनोऽम्बुज विबोधने का दिनकर सकल लब्धि निधान युग प्रधान। जितानैक वादीश्वर वृंद प्रणतानेक नर नायक मुकुट कौटि घृष्ट पदा-विंद । श्री सूर्य इव महाप्रसाद । चतुः षष्ठी सुरेन्द्र संगीमानं साधु वाद । श्री संडेरकीय गण बुधावतंस । सुभद्रा कुक्षि सरोवर राजहंस यशोवीर कुलाम्बर नमो मणि सकल चारित्री चक्रवर्त्ती वक्र चूडामणि भ० श्री प्रभु श्री यशोभद्रसूरय ऽपरनाम ईश्वरसूरि तत्पट्टे श्री चहुमान वंश श्रृंगार लब्ध समस्त निरवद्य विद्या जलाधिपार श्री श्री बदरीदेवादत्त गुरु-पद प्रसाद रय विमल कुल ऽबोधनैक प्राप्त परम यशोवाद भ० श्री शालिसूरित श्री सुमतिसूरित० श्री शांतिसूरित श्री ईश्वरसूरि एवं० यथाक्रम मनेक गुणा-निगण रोहण गिरीणा महा सूरिण। वंशे.पुन श्री शालि सूरित श्री सूमतिसूरि तत्पट्टालंकार हार भ० श्री शांतिसूरि वराणा स परिकराणा विजय राज्ये अथेह श्री मेदपाट देशे श्री सूर्यवंशी महाराजा(णा)धिराज श्री शिलादित्य वंशे श्री गुहदित्त राउल श्री बप्पाक श्री खुमाणादि महा-राजन्वयेराणां हम्मीर श्री खेतसिंह श्री लखमसिंह, पुत्र श्री मोकल मृगांक वंसोद्योनकार प्रताप मार्तण्डावतार आ समुद्र महि मंडला खण्डल अतुल महाबल राणा श्री कुम्भाजी पुत्र राणा श्री रायमल्ल विजयमान प्राज्य राज्ये तत्पुत्र महाकुँवर श्री पृथ्वीराजानु शासनात् श्री उवकेश वंशेय भण्डारी गोत्रे राउल श्री लाखण पुत्र श्री मं० दूदवंशे मं० मयूर सुत मं० सादुल तत्पुत्राभ्या मं० सीहासमंदाभ्या सद बाधव मं० कर्मसीधारा लाखादि सकुटुम्ब युताभ्या श्री नंदकुल वत्या पुर्या सं ६६४ श्री यशोभद्रसूरि मंत्र शक्ति समानिताया त० सायर कारित देव कुली कावुद्धारत सायर नाम श्री जीनवसत्या श्री आदिश्वरस्य स्थापनाका-रिता कृतः श्री शातिसूरिभि इति लघु प्रशस्तिरियंलि० आचार्य श्री ईश्वरसूरिणा उत्कीर्णा सूत्रधार सोमाकेन शुभं ॥

कुलवर बहुलता से इक्ष्वाकुभूमि अर्थात् विनता नगरी की भूमि मे निवास करता था। यह भूमि काश्मीर देश के परे थी क्योंकि विनता नगरी के चारों दिशा में चार पर्वत थे। जिसमें पूर्व दिशा मे अष्टापद अर्थात् कैलाशगिरि था। दक्षिण दिशा मे महा शैल्य था। पश्चिम दिशा मे सुर शैल्य। उत्तर दिशा मे उदयाचल पर्वत था। पृष्ठ नं० ४६६ में। इसका समर्थन आधुनिक शोधकर्ताओं के लेख से भी होता है। जैसा कि सरस्वती पत्रिका सन् १६३७ जनवरी के पृष्ठ २१ मे लिखा है— ताम्र युग पाषाण युग मे भी उदीच्य प्राच्य दो जाति होना माना। यह नूह का प्रलयका जमाना था। मनुष्यों का विकास भारत से ही हुआ और वहाँ से संसार भर मे फैला। प्रलय काका कलकरन्दी ने तो ईसा के पूर्व ४२०० वर्ष पूर्व माना। लेकिन यह ३४७५ वर्ष पूर्व का मानते है। पाषाण युग मे मनुष्य नर वानर थे पाषाण युग के पश्चात् मानव जाति में धातु का युग प्रारम्भ हुआ। धातु युग का प्रारम्भ ताम्र युग से हुआ। कश्मीर के पश्चिम सीमा चित्रालय में घास से गेहुं जव पैदा होना जर्मन के अन्वेष्क दल ने अनुसन्धान किया। कृषि का जन्म स्थान चित्राल है। वहाँ से दक्षिण पञ्जाब मे आये। जहाँ सप्त नदियाँ बहती है उसका सप्त सिन्धु नाम रक्खा। उनमे सरस्वती व सिन्धु सब मे बड़ी। सिन्धु से भी सरस्वती बड़ी। सरस्वती उस समय आर्यावर्त को दो सीमाओं से विभक्त करती थी। इसके पश्चिम ओर का भाग उदीच्य तथा पूर्व ओर का भाग प्राच्य कहलाने लगा। उत्तर भारत के ब्राह्मण आज भी प्राच्य और उदीच्य दो भागों मे विभक्त है। कान्यकुब्ज, मैथिल आदि प्राच्य, पञ्जाब, सिन्धु, राष्ट्र काठियावाड और गुजरात के ब्राह्मण उदीच्य इन दो जातियों से सारे ब्राह्मणों की उत्पत्ति हुई उदीच्य प्रदेश सरस्वती के पश्चिम तट देवयोनि वृत्त से मेसोपोटामिया तक फैला और प्राच्य देश इसके पूर्वी तट से बङ्गाल तक फैला। चित्राल कश्मीर ऋग्वेद मे ऋषि

पट्टा देख नामा मंडाया और यांने मान्या है सो अठाका भाई सांगा-वत होवो सो याने मानोगा दुबे काका सिवसिहजी सं० १६८७ का चेत्र सुद ७

नकल परवाना ठि० बेड़ा गोड़वाड़ (मारवाड़) का:-

अज ठिकाणे बेड़ा ता० २४-११-३० ई० मोहर छाप युक्त कुलगुरु इंद्रचंदजी दीपचंदजी रा वास सांडेराव तथा मारे ठिकाणा रा कुलगुरु हो और अबार मारे ठिकाणा रा नांव वगेरा माडिया है जिनरी सीख में अलावा दूजी सीख रे बन्दूक १ कारतूसी १२ नंबर री दी गई है फकत् दः अब्दुलाखां कामदार ठिकाणा। पंचोली गीसूलाल। ऊपर दर्ज है जी मूजिब महाराणाजी का परवाना व सलूंबर, बेगूं वगेरा उमरावां का पट्टा गुरां मगनलालजी प्यारचंदजी का निवास भींडर (मेवाड़) के पास भी हैं।

क्षत्रियों में राठोड़ खांप के कुलगुरु होने का प्रमाण वृज-पुरा के कुलगुरां पास—

जोधपुर महार जाधिराज का परवाना:-

स्वस्ति श्री-महाराजाधिराज महाराजाजी श्री गजसिंहजी महा राज कुमार श्री जशवंतसिंहजी मेड़ता कोठायता रीड़मल सिकेदार रामदास दीसेसुप्रसाद अठारा समाचार भला छे थारा देजो श्री दरबार रा उपाध्याय श्री भवानीकीरतजी रिखबदेवजी जावे है सो रू ३००) तीन सो ऊँट दोय आदमी चार साथे देजो ए कुलगुरु छे सं० १६६२ चेत विद ४ पाये तख्तगढ़।

दूसरा परवानाः—

स्विरूप श्री राजराजेश्वर महाराजाधिराज महाराजाजी श्री विज-यसिहजी महाराज कुँवार श्री जालमसिंहजी वचनायत महात्मा खरतरा राजसिहजी ने हमारा कुलगुरु छो सो थारा बेटा पोता ने हमारा मान्या जावसी सं० १८४६ भाद्रा विद ६ मुकाम पाय तगत जोधपुर।

महाराजाधिराज मानसिंहजी साहेबो ने कुल की वंशावली पर गाव एक वृजपुरो भेंट कीदो जो आजतक कब्जे में है ।

ठिकाना पोहकरण का परवाना

सिद्धश्री राव वहादुरजी ठाकुरा साहब श्री मंगलसिंहजी कंवर जी श्री चेनसिंहजी भंवरजी श्री भवानीसिंहजी राजस्थान पोखरण खाप चापावत • विट्ठलदासोत लिखावता कुलगुरु महात्मा खरतरा आनन्दी-लालजी बेटा विरदींचंदजी रा पोता रघुनाथमलजी सूं वंदना वाचजो तथा थें मारा सदावंध सुं कुलगुरु छो सो म्हारा वंशरा चांपावत विट्ठलदासोत पीढ़िया लगत थारा बेटा पोता ने मान्या जावसी आप कुलगुरु पूजनीक छो सं० १९८४ का मिती वैशाख सुद १४ दः पंचोली किशनलाल रा छे श्री रावरे हुक्म सु ।

रास ठिकाना का परवानाः—

स्वरुप श्री राव वहादुर ठाकुर साहब राज श्री नाथूसिंहजी पाहब कंवरजी श्री वहादुरसिंहजी राजस्थान रास खांप उदावत जगरा नोत लिखावता कुलगुरु महात्मा खरतरा आनंदीलालजी बेटा विरदी-

चंदजो रा पोता रुगनाथमलजी सुं वंदना वांचजो तथा थें मारा सदाबंध सुं कुलगुरु छो सो मारा वंश रा उदावत जगरामोत पीढिया लगात थारा बेटा पोता ने मानसी सं० १६८७ रा प्रथम आषाढ सुद १ दः कुशलराज कामदार कचहरी श्री रावला हुक्म ।

ठिकाना नींमाज (मारवाड़) -

स्वरूप श्री ठाकुरा साहेब राज श्री उम्मेदसिहजी साहेब राज स्थान नीम्बाज खांप उदावत जगरामोत लिखावत कुलगुरु महात्मा खरतरा, आणंदीलालजी बेटा बिरदीचंदजी रा पोता रुगनाथमलजी सुं वंदना बाचज्यो तथा थें मारा सदाबंध सुं कुलगुरु छो सो म्हारा वंशरा उदावंत जगरामोत आपरा बेटा पोता ने मान्या जावसी सं० १६८७ प्र० असाढ़ सुद ६ मंगलवार दः राठौड़ लालसिंह कामदार ।

ठिकाना खरवाः-

सिध श्री समस्थां भायां सगत सिंगोत योग खरवा थी रावजी राज श्री गोपालसिंहजी लि० जै जगदीश्वरजी की वांचजो अप्रंच ॥ गांव विरजपुरा का कुलगुरुजी आणंदीलालजी पुखराजजी बेटा विरदीचंदजी का पोता रुगनाथमलजी का राठोड़ वंशका कुलगुरु है और नामा मांडवा वाला हैं और आपणा बड़ेरा का नावा भी येहीज मांडता आया है सो अबभी मोजूदा ओलाद रा नावां मांडवा ने

आवे जद मंडाय दीज्यो अणारी मुरजादा माफक राखज्यो ए गुरु है मिति पोष विद १३ संवत् १६८६ ' का शनीवार । रावली सही ।

ठिकाना भादराजण –

मरे पर ए कुलगुरु आपणा है सो इणाने मानस्यो ॥

स्वरुप श्री राज श्री समस्था भाया जोग भादराजण थी ठाकुरा राज श्री इंद्रभाणसिंहजी लिखावता जुहार वाचज्यो अठारा समाचार श्रीजी रा तेज प्रताप थी भला छे राजरा सदा भला चाहिजे अप्रंच ॥ आपणा कुलगुरु महाराज खरतरा महात्मा श्री दीनानाथजी मूलजी अजीतमलजी ये आपणा कुलगुरु है सदावंश सुं इणाने सारा भाई मानज्यो शीष नवावज्यो ओलाद रा नावा नहीं मंडाया होवे सो मंडाय दीज्यो सदावंश सुं आपणा है सो इणारी मुरजाद राखजो सं० १६०६ असाढ़ विद ३ ।

ठिकाना रायपुर (मारवाड़) –

ठाकुरा राज श्री माधौसिंहजी राजस्थान रायपुर खांप उदावत राज सिंगोत लिखावता कुलगुरुजी महात्मा श्री दीनानाथजी सुं वंदना वाचज्यो तथा आप म्हारा वंशरा राज सिंगोत पीढिया लगात आप रा बेटा पोता ने मान्या जासी यो परवानो श्री ठाकुर साहब रा हुक्म सु कीनो छे द मूथा मोकमचंद पंचोली हीरालाल रा.छे सं० १६११ भादवा विद में ।

मालवे में रईस व जागीरदारों के गुरु हैं उनका इतिहास -

महाराज दलपतसिंहजी जिस समय अपने भाई बेटे की जागीरी में परगना बलाहेड़ा पाकर जोधपुर से अलग हुवे उस समय गुरां महेशदासजी को भी जोधपुर से अपने साथ लाये और अपने अलग कुलगुरु स्थापन कर तमाम जाया परण्या का दस्तूर बक्ष कर बलाहेड़े में जागीर बक्षी व वशावली सुण करके नामे लिखवा कर लाख पसाव बक्षा । सं० १६८० गाम डावडियोप गुरॉ हीराजी को सं० १७६६ में रतलाम राज्य सस्थापक महाराजा रतनसिंहजी के पुत्र अखेराजजी से गाम रतनपुरा परगने उगदड दाल्या पाये जो आज कल देवास राज्य में है ।

महाराजा रतनसिंहजी से सं० १७१५ मे नागड़ाखेड़ा जागीर में पाये जो आजकल सीतामोह राज्य में है । गुरा कानजी सं० १७४१ में महाराज रुगनाथ से सासण रुपे २००) की पाये। गुरा शोभजी सं० १७८७ में कुंवर वक्षसिंहजी के राजलोक से मोजे भुवाले में जागीर पाये। गुरॉ पेमजी जोधपुर महाराज अजीतसिंहजी से केरुरे मार्ग धरती बीघा २०० पाये । सं० १७६४ में व भुवाले में दरबार राजसिंहजी से जागीर पाये। गुरॉ रामलालजी से सं० १७८० में कुँअर वख्तसिंहजी से जागीर पाये। गुरॉ लालजी को महाराजा होलकर तुकोजीराव ने अपने गुरु माने थे । होलकर खानदान के उपाध्याय के बाद इन्हीं के गव अन्नत होता था। महाराजा होलकर ने अपने पास रखकर खास इन्दार में गजराबाई वाली हवेली ब्राह्मणों मुताबिक आठ आदमियों का भोजन व १५०) रुपया माहवार हतखर्च व तमाम जाया परण्या साल गिरह वगैरह के नेग दस्तूर मिलते थे यह लालजी महाराजा सेंधिया जियाजीराव वो मेदपाटेश्वर महाराणाजी

स्वरुपसिंहजी व जोधपुर नरेश आदि वड़े २ नृपतियों की सेवा में हाजिर हुए इनको सीतामोउ रईस श्री राजसिंहजी ने मोजे भुवाला मे जागीर वक्षी। सं० १८६४ में व संवत् १९१६ में रतलाम दरवार श्री रणजीतसिंहजी ने मोजे इटावा में जागीर वक्षी व संवत १८६८ में जड़वासे महाराज तख्तसिंहजी से जागीर पाये व पोलिटिकल एजेन्ट गवर्नर जनरल सेन्ट्रल इण्डिया मिस्टर हमिलटन साहब वहादुर के साथ रह कर सेन्ट्रल इण्डिया के इतिसास व इस तरफ केएटपतियों के खानदान की पूरी २ वकफियत दी व इनके वनाये हुए वंश वृक्ष अभी तक ए० जी० जी० के दफ्तर में मौजूद हैं व जव कभी रईसों में गोद लेने व हक हकूक के विषय में झगड़ा पड जाता है तो इस वंश-वृक्ष को ही सच्चा मान कर इसी के आधार पर फैसला होता है। साहब वहादुर ममदूह ने अपनी कलम से सार्टीफिकेट में "*This is a tree Rathaor Kulguru.*" ऐसा नोट किया है व समाचार पत्रों ने व इतिहासकारों ने समय पर आपके विषय में लिखा है—

इनके पुत्र केसरसिंहजी हुए यह महाशय महाराजा होल्कर शियाजीराव के पास रहे व इनके साथ जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंहजी साहब से मिले व वर्तमान सेंधिया महाराज के जन्मोत्सव में शरीक होके महाराजा माधोराव सेंधिया से मिले। वहां से मान पाये व जोधपुर महाराजा साहब श्री सरदारसिंहजी की शादी उदयपुर दरवार महाराणा सर फतहसिंहजी साहब के वाईजी साहब के साथ हुई। उस उत्सव में जोधपुर गये व मान पाये। सं० १९८१ में श्रीमान् वीकानेर नरेश श्री गगासिंहजी ने नहर खोली (ओपनसिरेमनी) के जलसे में पधारे श्रीमान् वीकानेर नरेश ने वायसराय साहब वहादुर श्रीमद इरविन व लेडी साहिवा ने व पञ्जाब गवर्नर जनरल

आदि बडे २ अंग्रेजों से खुद ले जाकर दस्तापोशी याने (हाथ मिलाया) और उनको सम्बोधन किया कि यह हमारे गुरु हैं। परिचय कराया दूसरी मरतबा महाराजा साहब के बाई साहिबा की शादी में शरीक हुवे। सन् १६११ में बादशाह पंचम जॉर्ज सम्राट के ताजपोशी के दरबार में भी हाजिर हुवे। झाबुए राजा दिल्ली कॉन्फ्रेंस में गये वहाँ भी शरीक हुए। रईस सीतोमोह के कंवर रघुवीरसिंहजी के नाम करण के मौके पर मोजा नागड़ाखेड़ा में जागीर बख्शी। पोलीटिकल एजेंट सरदारपुर ने झाबुआ गोदनशीनी के मामले में सार्टिफिकेट दिया। झाबुआ रईस ने १००) सालाना कर बख्शे इनके पुत्र निर्भय-सिंहजी को रियासत सेलाना झाबुआ अलीराजपुर व मालवा प्रान्त के तमाम ठिकानों में अपने कुलगुरु मान कर फिर नई सनदें कर दी।

रतलाम दरबार का पट्टाः-

सिधश्री महाराजाधिराज श्री श्री रणजीतसिंहजी आंगु कुलगुरु लालजी धनराज भैरू ने शुभ नजर फरमाय श्री बड़ा हजूर भैरव-सिंहजी रतलाम में पास राख्या और पटो ३६०) को कर बख्श्यो सो उ पटो देत माहे जमीन बीघा १८१ मोजे इटावा माताजी विजासण में चोतरा सूं उगमणी तरफ की मया दी गई सो हमेशा पुस्त दर-पुश्त पाल्या जासी पुण्यारत कर दीवी और जो कुलगुरु को हक दस्तूर जाया परण्या व नामा माडने का होवेगा वो मिल्या जावेगा थें अठे हाजर रिया जाज्यो। श्लोक मामूला। सं० १६२१ भाद्वा विद ३ हस्ताक्षर उपाध्याय मथुरालाल।

वंशावली में नामा मंडे वो सत्कार

श्रीमन्त महाराजाधिराज महाराजाजी श्री श्री १०८ श्री ·. कर्नल हिज हाइनेस सर सज्जनसिंहजी साहब बहादुर जी० सी० एस० आई० के० सी० एस आई० के० सी० वी० ओ० एडी सी टु हिज रायल हाईनेस दी प्रिन्स ऑफ वेल्स की सेवा में तेजसिंह वल्द भैरजी कुलगुरु सा० हाल रतलाम ने एक दरख्वास्त नामा लिखाने बाबत पेश होने से श्रीजी ने बराये खावन्दी ता० १-६-३३ ईस्वी मिती भाद्रा सुद १२ सं. १६८६ शुक्रवार के सुबह १० बजे का मुहुर्त होने से वंशावली बंचने की तजवीज महल रणजीत-विलास के पूर्व जानीब ऊपर के गोखड़े में की गई। पूजन के सामान का प्रबन्ध मारफत मुन्सरिम जागीरदारान के किया गया। वहाँ श्रीजी हजूर साहब बहादुर मय श्रीमान् बड़े महाराजकुँवार श्री लोकेन्द्रसिंहजी साहब और छोटे बापूलालजी श्री चंद्रकँवरजी साहब गोखडे में विराजमान हुए, बाद कुलगुरु तेजसिंहजी मदनसिंहजी को गोखड़े में बिठा कर सामने एक बाजोट के ऊपर वंशावली रखी गई और पूजन विधि सहित श्रीमन्त बडे महाराजकुँवार साहब के हाथ से श्रीमती छोटा बापूलालजी श्री चन्द्रकुँवर साहिबा के हाथ से पूजन हुई भेंट ५) रुपये श्रीफल एक प्रसाद ५ पाँच सेर पूजन कराने में गुरु भागीरथजी और दाना दीक्षित सुन्दरवल्लजी थे। बाद में श्रीमन्त बडे महाराजकुँवार साहब व श्रीमती छोटे बापूलालजी साहबा ने कुलगुरु तेजसिंहजी के तिलक किया बाद में मदनसिंहजी के तिलक किया इसके बाद तेजसिंहजी ने श्रीमान् श्री हजूर साहब के तिलक किया। फिर महाराजकुँवार साहब के व छोटे बापुलाल के तिलक किया। पश्चात् वंशावली बंचनी प्रारम्भ हुई उस वक्त वहाँ पर दीवान साहब दरबार राय-

बहादुर देवीशंकरजी दवे व मेजर शिवजी परसनल असिस्टेन्ट जागीरदार साहब गजोड़ा मुरारीलालजी मुंसरिम जागीरदारान लक्ष्मीनारायणजी, सेक्रेटरी कौंसिल महाराज अमरसिंहजी, शिवनाथसिंहजी, मुनीम नन्दलालजी, सरदार भभूतसिंहजी, व्यासजी नाथूलालजी चोपदारों के जमादार याकूबजी वगैरह लोग हाजिर थे। बाद सुनने वंशावली दीवान साहब ने मुख्तसिर नाम लिखा कर मुहुर्त किया बाद दरबार बरखास्त हुआ।

इसी तरह कुलगुरु होने बाबत—
झाबुआ, कणेरी, आम्बासुखेड़ा, बरमावल, भारसीखेड़ा आदि की सनदें भी हैं:—

जैसे सरवण जागीरदार साहब ने लिखा—

राजश्री ठाकुर साहब अमरसिंहजी स्वस्थान सरवणआ कुलगुरु लालजी चिरंजीव धनराज भेरां से पायलागणो वंचसी अपरंच॥ म्हारा पुरखाए थाँरा पुरखा का पग पूजा सो थें मारे वंश लारे हो सपूत कपूत वेवेगा ज्याने मान्या जावांगा। थें राठोड़ वंशरा कुलगुरु हो सो थांरा वंश सिवाय दूसरा कुलगुरू आवे तो मानागा नहीं और थांने हमेशा पुश्तदरपुश्त म्हारो थांणो वंश रहेगा जठातक मान्या जावांगा। मारफत ठाकुर साहब लालसिंहजी नकल तिरवाड़ी सदाशिव मिती चेत सुद ७ सं० १९४४ का

इसी तरह इडर में भी बरताव है।

कानोड़ (मेवाड़) रावतजी सारंगदेवोत खांप
प्रथम श्रेणी के सामन्त:-

सिधश्री महारावत श्री सारंगदेवजी वचनायतु गुरुजी हीरा है बाई उम्मेदकंवर री भणावणी में गाम अचलाणा रा तलाव पार

१

सन् १९१४ की बात है। जब दक्षिण अफ्रीकाका कार्य पूरा करके महात्माजी विलायत गये और वहाँसे हिन्दुस्तान लौटे, तब दक्षिण अफ्रीकाके अिस विजयी बैरिस्टरकी मुलाकात लेनेके लिअे अेक पारसी पत्र-प्रतिनिधि बम्बअीके बन्दर पर ही जाकर अुन्हें मिला। मुलाकात लेनेवालोंमें सबसे प्रथम होनेकी अुसकी ख्वाहिश थी।

अुसने जो सवाल पूछा, अुसका जवाब देनेके पहले बापूने कहा — 'भाअी तुम हिन्दुस्तानी हो, मैं भी हिन्दुस्तानी हूँ। तुम्हारी मादरी ज़बान गुजराती है, मेरी भी वही है। तब फिर मुझे अंग्रेजीमे सवाल क्यों पूछते हो? क्या तुम यह मानते हो कि चूँकि मैं दक्षिण अफ्रीकामे जाकर रह आया, अिसलिअे अपनी जन्मभाषा भूल गया हूँ या यह कि मेरे जैसे बैरिस्टरके साथ अंग्रेजी ही मे बोलनेमे शान है?'

पत्र-प्रतिनिधि शर्मिन्दा हुआ था नहीं मैं नहीं जानता, किन्तु आश्चर्य-चकित तो जरूर हुआ। अुसने अपनी मुलाकातके वर्णनमें बापूके अिसी जवाबको प्रधानपद दिया था।

अुसने क्या क्या सवाल पूछे और बापूने क्या जवाब दिये, सो तो मैं भूल गया हूँ। किन्तु सब लोगोंको यही आश्चर्य हुआ, और बहुतों को आनन्द भी, कि हमारे देशके नेताओंमे कमसे कम अेक तो अैसा है, जो मातृभाषामे बोलनेकी स्वाभाविकताका महत्त्व जानता है।

अुस समयके अखबारोंमें यह किस्सा सब जगह छपा था।

२

बापू जब विलायतसे हिन्दुस्तान लौटे, तब मैं शान्तिनिकेतनमे था। अुस संस्थाका अध्ययन करनेके लिअे अुसमें कुछ महीनों रहकर और

शिक्षकका काम करके अुसके अन्दरूनी वायुमण्डलको मुझे समझना था। रविबाबूने बड़ी अुदारतासे मुझे वह मौका दिया था।

वहीं पर बापूके फिनिक्स आश्रमके लोग भी मेहमानके तौर पर रहते थे। बापू जब दक्षिण अफ्रीकासे विलायत गये, तब अुन्होंने अपने आश्रमवासियोंको श्री अेंड्रयूज़के पास भेजा था। श्री अेंड्रयूज़ने अिन्हें कुछ दिन महात्मा मुशीरामके गुरुकुलमे हरिद्वारमे रखा और बादमे शान्तिनिकेतनमें।

अखबार पढ़नेके कारण मैं दक्षिण अफ्रीकाका अपने लोगोंका अितिहास जानता ही था। मेरे अेक स्नेहीके द्वारा गांधीजीके अफ्रीकाके आश्रमके बारेमें भी सुना था। सम्भव है अुन्हींके द्वारा आश्रमवासियोंने भी मेरा नाम सुना हो। शान्तिनिकेतनमें जाते ही मैं अिस फिनिक्स पार्टीमें करीब करीब शरीक हो गया। सुबह और शामकी प्रार्थनायें अुन्हींके साथ करने लगा। शामका खाना भी वहीं पर खाने लगा। ये आश्रमवासी सुबह अुठकर अेक घण्टा मेहनत मजदूरी करते थे। शान्तिनिकेतनवालोंने अिन्हें अेक काम सौंप दिया था। शान्तिनिकेतनकी भूमिके पास अेक तलैया थी और पास ही अेक टीला था। अिस टीलेको खोदकर तलैयाका गड्ढा भरनेका यह काम था। हम दस बीस आदमी यदि रोज अेक घण्टा काम करते रहते, तो न जाने कितना समय अुसे पूरा करनेमे लग जाता। लेकिन हमे तो निष्काम कर्म करना था। रोज बड़े अुत्साहसे हम अपना काम करते जाते थे। मि० पियर्सन भी हमारे साथ आते थे।

जब बापू शान्तिनिकेतन आये, (अुनके आनेका सारा बयान मैं अलग दूँगा।) तो रातको देर तक हम बाते करते रहे। सुबह अुठकर प्रार्थनाके बाद हम मजदूरीके लिअे गये। वहाँसे लौटकर आये तो क्या देखते हैं! हम लोगोंका नाश्ता — फल आदि सब काटकर — अलग अलग थालियोंमें तैयार रखा है। हम सबके सब काम पर गये थे, तब माता-जैसी यह सब मेहनत किसने की? मैंने बापूसे पूछा (अुन दिनों मैं अुनसे अंग्रेजीमें ही बोलता था) — 'यह सब किया किसने?' वे बोले — 'क्यों, मैंने किया है।' मैंने सकोचसे कहा — 'आपने क्यों किया? मुझे अच्छा नहीं लगता कि आप सब तैयारी करें, और हम बैठे खायें।'

'क्यों अुसमें क्या हर्ज है!' वे बोले। मैंने कहा—'आप सरीखोंकी सेवा लेनेकी हममें योग्यता तो हो।'

अिस पर बापूने जो जवाब दिया, अुसके लिअे मैं तैयार नहीं था। मेरा वाक्य 'we must deserve it' सुनते ही बिलकुल स्वाभाविकतासे अुन्होंने कहा 'which is a fact.' मैं अुनकी ओर देखता ही रहा। फिर हँसते हँसते अुन्होंने कहा—'तुम लोग वहाँ काम पर गये थे और यहाँ नाश्ता करके फिर और काम पर ही जाओगे। मेरे पास खाली समय था। अिसलिअे तुम्हारा समय मैंने बचाया। अेक घण्टेका काम करके अैसा नाश्ता पानेकी योग्यता तो तुमने हासिल कर ही ली है न!'

जब मैंने कहा था we must deserve it, तो मेरा मतलब यह था कि अितने बड़े नेता और सत्पुरुषकी सेवा लेनेकी योग्यता तो हममें हो। लेकिन मेरी यह भावना अुनके दिमाग तक पहुँची ही नहीं। अुनके मनमें तो सब लोग अेक सरीखे। मैंने सेवा की, अिसलिअे अुनकी सेवा लेनेका हकदार बन गया।

३

सन् १९१४ की ही बात है। महायुद्ध छिड़ गया था। और गांधीजी हिन्दुस्तान लौटे नहीं थे। शान्तिनिकेतनमें जब मैं था, तो वहाँके आम रसोअी घरमें गेहूँकी रोटी नहीं बनती थी। सब लोग भात ही खाते थे। वहाँ दो तीन बंगाली लड़के थे, जो अजमेरकी तरफ रहे थे। अुनके लिअे थोड़ी रोटियाँ बनती थीं। पहले दिन जब मैंने रोटी माँगी, तो सबकी रोटियाँ मैं अकेला ही खा गया। रोटी अैसी बनी थी कि बिलकुल चमड़ा हो। अुसका नाम मैंने मोरेक्को लेदर (Moracco Leather) रखा था।

अुन दिनों मैं स्वभावसे ही बड़ा प्रचारक था। सबके आहारमे भात कम और रोटी ज्यादा हो, यह मेरा आग्रह था। मेरे प्रचारके फलस्वरूप पाँच अध्यापक और ग्यारह विद्यार्थी अलग रसोअी करनेके लिअे तैयार हो गये। मैंने अुस दलका नाम रखा था Self-helpers' Food Reform League (स्वावलम्बियोंका भोजन सुधारक

मण्डल)। हम सब मिलकर अपने हाथसे पकाते थे, बरतन भी मॉजते थे, और मसाले आदिका व्यवहार नहीं करते थे। रोटी तो मुझे ही बनानी पड़ती थी। वह अैसी अच्छी बनती थी कि लीगके बाहरके आदमी भी खाने आते थे। हमारे क्लबमें सतोष बाबू मजूमदार थे। वे अमेरिकासे अध्ययन करके आये थे। मैंने अेक दिन कहा कि बरतन मॉजनेसे और कमरा साफ करनेसे हमारी आत्मा भी साफ होती है। वे हँस पड़े और कहने लगे — 'हृदयको साफ करना अितना आसान नहीं है।'

कुछ भी हो हम लोगोंका बन्धुभाव खूब बढ़ा। शान्तिनिकेतनने हमें अपने प्रयोगके लिअे पूरा सुभीता कर दिया था।

जब गांधीजी वहाँ आये, तो अुन्होंने हमारा यह कार्य देखा। बड़े खुश हुअे किन्तु अुनका स्वभाव तो बड़ा ही लोभी। कहने लगे — 'यह प्रयोग अितने छोटे पैमानेपर क्यों किया जाता है? शान्तिनिकेतनका सारा रसोअीघर ही अिस स्वावलम्बन तत्त्वपर क्यों नहीं चलाया जाता?'

बस, दक्षिण अफ्रीकाके विजयी वीर तो ठहरे। वहाँके अध्यापकोंको और व्यवस्थापकोंको बुलवाया और अुनके सामने अपना प्रस्ताव रखा। वे बड़े संकोचमें पडे। अितने बड़े मेहमानको क्या जवाब दिया जाय? गांधीजीकी यह जल्दबाजी मुझे अनुचित-सी लगी। मैंने कहा — 'मेरा छोटासा प्रयोग चल रहा है। अगर अुन्हे पसन्द आयेगा, तो धीरे धीरे अैसे क्लब और भी बन जायँगे।' मैंने यह भी कहा कि 'दो सौ आदमियोंका आम रसोअी-घर नये ढंगसे चले न चले। अिससे बेहतर यह होगा कि यहाँ पर पचीस पचीस या तीस तीस आदमियोंके छोटे छोटे क्लब बन जायें।'

कर्मवीर मेरा प्रस्ताव थोड़े ही कबूल करनेवाले थे! कहने लगे — 'अगर आठ क्लब बनाओगे तो तुम्हे कमसे कम सोलह expert (विशेषज्ञ) चाहियें। अितने है तुम्हारे पास? बड़ी बड़ी फौजें जैसे काम करती हैं, वैसे ही हमें करना होगा और साथ मिलकर काम करने और साथ खानेकी आदत डालनी होगी। अगर छोटे छोटे क्लब ही बनाने हैं, तो कुछ महीनोंके बाद बना सकते हो। आज तो आम रसोअी ही चलानी होगी।'

अुनकी दलील ठीक थी। मै चुप हो गया। लेकिन मैंने मनमें कहा—'सस्था न आपकी है, न मेरी; और गुरुदेव भी (शान्तिनिकेतनमें रविबाबूको गुरुदेव कहते थे) अिस समय यहाँ नहीं हैं। अितना बड़ा अुत्पात आप क्यों करने जा रहे हैं?'

बापूने श्री जगदानन्द बाबू और शरद बाबूको बुलवाया और पूछा कि 'यहाँ रसोअिये और नौकर मिलकर कुल कितने आदमी हैं?' जब अुन्हें पता चला कि करीब पैंतीस, तो बोले—'अितने नौकर क्यों रखे जाते हैं? अिन सबको छुट्टी दे देनी चाहिये।' व्यवस्थापक बेचारे दिङ्मूढ़ हो गये। अुन्हें सीधे कहना चाहिये था कि हम अेकाअेक अैसा नहीं कर सकते। किन्तु अुन्होंने देखा कि मि० अेंड्रूयूज़ और पियर्सन बापूके प्रस्तावके पक्षमे है, और गुरुदेवके दामाद नगीनदास गांगोली भी अुसी प्रभावमे आ गये हैं; और विद्यार्थी तो ठहरे बदर। किसी भी नयी बातका खफ्त अुन पर आसानीसे सवार हो जाता है। सारा वायुमडल अुत्तेजित हो गया। मैंने देखा कि मि० अेंड्रूयूजको स्वावलम्बनका अितना अुत्साह नहीं था जितना ब्राह्मण जातिके रसोअियेको निकाल देनेका। विश्व-कुटुम्बमें विश्वास करनेवाली अितनी बडी संस्थामें ये ब्राह्मण रसोअिये अपनी रूढ़ि चलाते और किसीको रसोअीघरमें पैठने नहीं देते।

लेकिन हम लोग 'सामाजिक या धार्मिक सुधारके खयालसे प्रेरित नहीं हुअे थे; हमे तो जीवन सुधारकी ही लगन थी।

तय हुआ कि बापू विद्यार्थियोंको अिकट्ठा करके पूछें कि अैसा परिवर्तन अुन्हें पसन्द है या नहीं। क्योंकि, नौकरोंके चले जाने पर काम तो अुन्हींको करना था। मि० अेंड्रूयूज़ बापूके पास आकर कहने लगे—'मोहन, आज तो तुम्हे अपनी सारी वक्तृता काममें लानी पड़ेगी। लड़कोंको अैसी जोशीली अपील करो कि लड़के मंत्रमुग्ध हो जायँ। क्योंकि तुम्हारी अिस अपील पर ही सब कुछ निर्भर है।' बापूने कुछ जवाब नहीं दिया।

विद्यार्थी अिकट्ठे हुअे। हम लोग तो गांधीजीकी जोशीली अपील सुननेकी अुत्कण्ठासे अपना हृदय कानमें लेकर बैठ गये।

और हमने सुना क्या? ठडी मामूली आवाज़; और बिलकुल व्यवहारकी बातें। न अुसमें कहीं वक्तृता थी, न कहीं जोश। न भावुकता (sentiment) को अपील थी, न बहुत अूँची या लम्बीचौड़ी फलश्रुति।

तो भी अुनके वचन काम कर गये। जिन विद्यार्थियोंको मैं अच्छी तरह जानता था कि वे शौकीन और आरामतलब हैं, वे भी अुत्साहमें आ गये और अुन्होंने अपनी राय अिस प्रयोगके पक्षमें दी।

अब व्यवस्थापकोंने अपनी अेक आखरी किन्तु ठूली कठिनाअी पेश की। कहने लगे — 'नौकरोंको आजके आज नौकरीसे मुक्त करना हो तो अुनको तनख्वाह देनी पड़ेगी। पैसे लाने पड़ेंगे। अिस वक्त खज़ानचीके पास नहीं हैं।' गांधीजीके पास होते तो वे तुरन्त दे देते। वे यहाँ मेहमान थे, किससे माँग सकते थे? अुनके आश्रमवासी भी आश्रमके मेहमान ही ठहरे। अुनके पास कुछ नहीं था।' मि० अेंड्रयूज़के पास भी अुस वक्त कुछ नहीं था। मैं था अेक घूमनेवाला परिव्राजक। तो भी पता नहीं कैसे गांधीजीने मुझसे पूछा —'तुम्हारे पास कुछ है?' मैंने कहा — 'हैं।' मेरे पास करीब दो सौ रुपये निकले। मैंने अुन्हे दे दिये। फिर क्या! नौकरोंको तनख्वाह दे दी गयी, और वे आश्चर्यचकित होकर चले गये। अब सवाल अुठा, रसोअीघरका चार्ज कौन ले। मेरी तो फुड रिफार्मर्स लीग चल ही रही थी। गांधीजीने मुझसे पूछा —'लोगे?' मैंने अिन्कार किया। आत्मविश्वासके अभावके कारण नहीं, अिस प्रयोग पर मेरी अश्रद्धा थी सो भी नहीं, किन्तु मैं जानता था कि यह सारी अनधिकार चेष्टा है। मैंने कहा —'मेरा छोटासा प्रयोग चल रहा है। अुससे मुझे सतोष है। अितना बड़ा व्यापक परिवर्तन अेकाअेक करना मुझे ठीक नहीं जँचता।' लेकिन अिस तरह गांधीजी रुकनेवाले थोड़े ही थे। और अुनका भाग्य भी कुछ अैसा है कि अगर अेक आदमीने अिन्कार किया, तो अुनका काम करनेके लिअे दूसरा कोअी न कोअी अुन्हें मिल ही जाता है। मेरे मित्र राजंगम् अथवा हरिहर शर्मा शान्तिनिकेतनमें ही काम करते थे। अिन्हें हम अण्णा कहते थे। वे तैयार हो गये। कहने लगे —'मैं चार्ज लूँगा।' अब सवाल आया, मदद कौन करेगा। तब मैंने कहा —'जब मेरे मित्र कोअी काम अुठाते है, तब मदद करना मेरा धर्म होता है। मैं यथाशक्ति मदद करूँगा।' गांधीजीने कहा —'तुम्हारा प्रयोग जो छोटे पैमाने पर चल रहा है, अुसका अिस बड़े प्रयोगमें विसर्जन करो और सारी शक्ति अिसीमें लगा दो।'

वैसा ही किया गया। और फिर मैं तो राक्षस जैसा काम करने लगा। बारह-अेक बजे यह सब तय हुआ होगा। तीन बजे हमने चार्ज लिया और शामको लड़कोंको खिलाया। गांधीजी स्वय आकर काम करने लगे। शाक सुधारनेका काम अुन्होंने किया। रोटियाँ तैयार करनेका काम मेरा था। मेरी रोटियाँ अितनी लोकप्रिय हुआीं कि जहाँ छह रोटियाँ बनती थीं, वहाँ दो सौ बनने लगीं। पत्थरके कोयलेके चूल्हे, अुनपर लोहेकी गरम चादरें, और अुनपर मैं दो दो रोटियाँ अेकपर अेक रखकर हिराफिरा कर सेंकता था। अिस तरह चार जुफ्त याने अेक साथ आठ रोटियोंकी ओर मैं ध्यान देता था। विद्यार्थी रोटियाँ बेलबेलकर मुझे देते थे। गूँधनेका काम चिंतामणि शास्त्री कर देते थे। सुबहका नाश्ता दूध केलेका था। बर्तन माँजनेके लिअे भी बड़े विद्यार्थियोंकी अेक टुकड़ी तैयार हो गयी थी। अुनका भी सरदार मै ही था। बर्तन माँजनेवालोंका अुत्साह कायम रहे, अिसलिअे वहाँपर कोअी विद्यार्थी अुन्हें कोअी रोचक अुपन्यास पढ़कर सुनाता था, कभी कोअी सितार बजाता था। मेरी यह योजना शान्तिनिकेतनवाले रसिक अध्यापकोंको बहुत ही अच्छी लगी।

अिस तरह दो-चार दिन गये और गांधीजी अपने मित्र डाक्टर प्राणजीवन मेहतासे मिलनेके लिअे बर्मा (ब्रह्मदेश) जानेके लिअे तैयार हो गये। हरिहर शर्माने कहा—'मैं भी अिनके साथ जाअूँगा।' (शर्माजी पहले डा० प्राणजीवन मेहताके यहाँ लड़कोंके ट्यूटर रह चुके थे।) मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैं शिकायत करने गांधीजीके पास गया। गांधीजीने मेरा काम तो देखा ही था। अुन्होंने ठंढे पेटे मुझे कहा,—'तुम तो सब कुछ चला सकोगे। लेकिन अगर तुम्हारी अिच्छा है, तो अण्णाको चार छह दिनके लिअे यहाँ रख जाअूँ। वे मेरे पीछे आयेंगे।' मै और भी झल्लाया। मैंने कहा—'जिम्मेदारी तो अुन्होंने ही ली थी। अब यह छोड़कर कैसे जा सकते हैं! और अगर अुन्हें जाना ही है, तो चार छह दिनकी मेहरबानी भी मुझे नहीं चाहिये। अगर अुन्हें कल जाना है, तो आज चले जायँ।'

गांधीजीने देखा था कि मैं तो नये प्रयोगमे रँगा हुआ हूँ। कुछ भी दया किये बगैर अुन्होंने कहा—'अच्छा, तब तो ये मेरे ही साथ जायेंगे।' और सचमुच दूसरे ही दिन अण्णा गांधीजीके साथ चले गये!!

अिस प्रयोगका आगे क्या हुआ, सो यहाँ बतानेकी ज़रूरत नहीं। रवीन्द्रबाबू कलकत्तेसे आये। अुन्होंने अिस प्रयोगको आशीर्वाद दिया। कहा कि अिस प्रयोगसे संस्थाको और बंगालियोंको बड़ा लाभ होगा।

धीरे धीरे नावीन्य कम होता गया। लड़के थकने लगे। मि० पियर्सनने भी मेरे पास आकर कहा—'काम तो अच्छा है, लेकिन पढ़ने लिखनेका अुत्साह नहीं रह जाता है।' बड़ी बहादुरीसे हमने चालीस दिन तक अिसे चलाया। फिर छुट्टियाँ आ गयीं। छुट्टियोंके बाद किसीने अिस प्रयोगका नाम भी नहीं लिया। मै भी शान्तिनिकेतन छोड़कर चला गया।

४

थोड़े ही दिनोंमें गांधीजी बर्मासे लौटे। हमारा प्रयोग चल ही रहा था। अितनेमें पूनासे तार आया: गोखलेजीका देहान्त (फ़रवरी १९१४) हो गया। गांधीजीने तुरन्त पूना जानेका तय किया। अिसके पहले गोखलेजी अुनसे कहते थे—'सर्वेण्ट्स आफ अिण्डिया सोसायटीके सदस्य बनो।' लेकिन गांधीजीने निश्चय नहीं किया था। अपने राजकीय गुरुकी मृत्युके पश्चात् अुनकी यह अंतिम अिच्छा गांधीजीके लिअे आज्ञाके समान हो गयी। वे पूना गये, और सर्वेंट्स आफ अिण्डिया सोसायटीमे प्रवेश पानेके लिअे अर्जी दे दी।

अर्जी पाकर गोखलेजीके अन्य शिष्य घबरा गये। वह सारा किस्सा नामदार शास्त्रीजी ने दोतीन जगह अपनी अप्रतिम भाषामें वर्णन किया है। अुसे यहाँ देनेकी ज़रूरत नहीं। सार यह था कि वे जानते थे कि गांधीजीको वे हजम नहीं कर सकेंगे। किन्तु गोखलेजीके ही (creed) (राजनीतिक सिद्धान्तों) को गांधीजी मानते थे। अैसी हालतमें अुनकी अर्जी अस्वीकार कैसे की जाय, अिसी असमंजसमें वे पड़े थे। परिस्थिति ताड़कर गांधीजीने ही अपनी अर्जी वापिस ले ली और अपने गुरुभाअियोंको संकटसे मुक्त कर दिया। फिर भी अवैधरूपसे सोसायटीके जलसोंमें वे अुपस्थित रहते, और संस्थाको अुन्होंने समय समय पर मदद भी काफी दी।

अुम्र थी। अुन्हें अपने लिअे कोअी विभूति (Hero) चाहिये थी। गोखलेजीने असाधारण सहानुभूति बतायी और अुनकी कदर की, अिसीसे अुन्होंने गोखलेकी राजनीतिमें अपने सब आदर्श देख लिये। कुछ भी हो। गोखले बापूके जीवन गुरु नहीं थे।

श्रीमद् राजचन्द्र (जो बम्बअीके अेक शतावधानी जौहरी थे) की धर्मनिष्ठा और आत्मप्राप्तिकी बेचैनी देखकर बापूने अुनसे बहुतसे प्रश्न पूछे थे और समाधान भी पाया था। तबसे 'श्रीमद्'के शिष्य तो यह कहते नहीं थकते कि राजचन्द्र गांधीजीके गुरु थे।

बापूने कुछ हद तक अिस बातको स्वीकार भी किया। लेकिन जब यह बात बहुत आगे बढी, तब अुन्हें जाहिर करना पड़ा कि मैं राजचन्द्रको मुमुक्षु तो जरूर मानता हूँ, किन्तु साक्षात्कारी पुरुष नहीं।

किसी समय बापूने अपने किसी लेखमें लिखा था कि 'मैं गुरुकी खोजमें हूं। क्योंकि गुरु मिलने पर मनुष्यका अुद्धार हो ही जाता है'। बस, अितना लिखना था कि अुनके पास सैकड़ों चिट्ठियॉं आने लगीं। कोअी लिखता था, अमुक जगह अेक बड़े महात्मा रहते हैं, वे बड़े योगी हैं, अुन्हे सब सिद्धियाँ प्राप्त हैं, आप अुनके पास जाकर अुपदेश लीजिये। कोअी किसी सत्पुरुषकी सिफारिश करता था। यदि किसीने खुदकी ही सिफारिश करते हुअे बापूके गुरु बननेकी तैयारी दिखायी हो तो मैं नहीं जानता। लेकिन बापूके अुद्धारकी अिच्छासे लोगोंने अुन्हें अनेक मार्ग दिखाये। अन्तमें बापूको जाहिर करना पड़ा कि 'जिस गुरुकी खोजमें मैं हूं वह स्वयं भगवान ही है। भगवान ही मेरे गुरु बन सकते हैं, जिन्हें पानेके बाद कोअी साधना बाकी भी नहीं रहती। मेरी यह सारी जिन्दगी, सारी प्रवृत्ति अुस गुरुकी खोजके लिअे ही है।'

* * *

जिस तरह हम आश्रमवासी गांधीजीको बापू कहते हैं, अुसी तरह शान्तिनिकेतनमें लोग रविबाबूको गुरुदेव कहते थे। अब गांधीजीका यह स्वभाव या रिवाज है कि जो व्यक्ति जिस नामसे मशहूर हो जाय, वही नाम वे भी स्वीकार कर लेते हैं। रविबाबूका जिक्र वे 'गुरुदेव'के नामसे करने

लगे। तिलकजीको ही लीजिये · पहले बापू अुन्हें तिलक महाराज कहते थे। बादमें अुन्होंने देखा कि महाराष्ट्रमें लोग अुन्हें लोकमान्य कहते हैं, तो अुन्होंने भी लोकमान्य कहना शुरू कर दिया। यही बात है मि० जिन्नाके बारेमें भी। मि० जिन्नाके अनुयायी अुन्हें कायदे आजम कहते हैं, अिसलिअे बापू भी अुनका जिक्र अुसी नामसे करते हैं। श्री वल्लभभाअी पटेलको गुजरातके कार्यकर्ता श्री मणिलाल कोठारीने सरदार कहना शुरू किया और लोग भी अुन्हें सरदार कहने लगे। बापूने यह बात सुनी तो अुन्होंने भी वही नाम चलाया।

अिन बड़े लोगोंकी बात तो छोड़ दीजिये। मै अपने परिवारमें, विद्यार्थियोंमें और मित्र मण्डलीमें काकाके नामसे मशहूर हूँ। यहाँ तक कि जब मेरा पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर कहीं लिखा जाता है, तो लोग मुझे पूछते हैं कि क्या ये दत्तात्रेय बालकृष्ण तुम्हारे कोअी रिश्तेदार हैं? बस, अिसी परसे बापू भी मुझे काका ही कहते हैं। अुनकी चिट्ठियोंमें भी 'चिरजीव काका'से प्रारम्भ करते हैं और समाप्त करते है 'बापूके आशीर्वाद' से। नामके लिअे 'काका' शब्द केवल विशेष नाम रहा है, अुसका कोअी विशेष अर्थ नहीं है। अिसी तरह, रथीबाबू (रविबाबूके लड़के)को अथवा श्री विधुशेखर शास्त्रीजीको लिखते समय रविबाबूका जिक्र गुरुदेव नामसे ही करते है, क्योंकि वही नाम अुन लोगोंको प्रिय है। ज्यादा नहीं जाननेवाले लोगोंने अिससे अनुमान लगाया कि गांधीजी रविबाबूको अपना गुरुदेव मानते हैं!

अिसी सिलसिलेमे अेक छोटा-सा प्रसंग यहाँ लिख देता हूँ। मैं शान्तिनिकेतन गया, तो सबसे पहले गुरुदेवसे मिला। अुनसे कहा कि मैंने आपके गीतांजलि आदि ग्रथ पढे हैं, अब मैं आपके कुछ आध्यात्मिक अनुभव जानना चाहता हूँ। मै विशेष प्रश्न पूछूँ अुसके पहले वे कहने लगे — 'लोग मुझे गुरुदेव तो कहते हैं, लेकिन मैं गुरुमें विश्वास नहीं करता। मैं नहीं मानता कि कोअी किसीका गुरु बन सकता है, कोअी किसीको मार्ग बता सकता है। अध्यात्म अेक अैसा क्षेत्र है कि जिसमें हरअेकको अपने लक्ष्यकी ओर जानेका रास्ता भी अपने आप तैयार करना पड़ता

है। अध्यात्म हमेशा unchartered sea के जैसा क्षेत्र ही रहा है। मेरी साधना मुझे मेरे कवि होनेसे मिली है। जब मैं 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' कहता हूँ, तब यह सारा विश्व मुझे सत्य रूप दीख पड़ता है। अिस विश्वको अिन्कार करनेवाला मायावाद मेरे पास नहीं है।' अिसी तरह अनेक बातें कहीं। सारे प्रवचनकी रिपोर्ट देनेका यह स्थान नहीं है। मुझे अितना ही बताना है कि गुरुदेवके नामसे अपनी मण्डलीमें जो हमेशा पुकारे जाते थे, वे स्वयं गुरु-जैसी किसी वस्तुको मानते ही नहीं थे।

४३

१९२१में बेजवाडाकी अखिल हिन्द कांग्रेस महासमिति (A. I. C. C.) ने तय किया था कि लोकमान्य तिलकके स्मारकमें अेक करोड़ रुपया अिकट्ठा किया जाय। अुसी सिलसिलेमें धन अिकट्ठा करनेकी कोशिशें चल रही थीं। अेक दिन श्री शंकरलाल बैंकरने आकर कहा — 'हमारे प्रान्त (बम्बअी) में जितनी मुख्य मुख्य नाटक कम्पनियाँ हैं, वे सब मिलकर अपने सबसे अच्छे नटों द्वारा अेक किसी अच्छे नाटकका अभिनय करेंगी। अुस दिन अगर बापू थियेटरमें अुपस्थित हो जायँ, तो वे लोग अुस खेलकी सारी आमदनी तिलक स्वराज्य फण्डमें देनेके लिअे तैयार हैं।' अुन्होंने आगे कहा — 'हजारोंकी नहीं, लाखोंकी बात है, क्योंकि टिकटोंकी मनमानी कीमत रखेंगे।' बापू अेक क्षणका भी विलंब किये बगैर बोले — 'यह नहीं हो सकता। मैं कभी धंधादारी नटोंके नाटक देखने नहीं जाता। कोअी मुझे करोड़ रुपया भी दे, तो भी मैं अपना नियम नहीं तोड़ सकता।'

शंकरलालजीका प्रस्ताव जैसाका तैसा रह गया।

४४

सन् २१ की ही बात है। अहमदाबादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी। स्थापनामें मेरा काफी हाथ था। अुन दिनों मैं दिनरात भूत-जैसा काम करता था। अेक दिन विद्यापीठके नियामक मण्डलकी बैठक थी। अुसमें मि० अेंड्रूयूज भी आये थे। अुन्होंने सवाल छेड़ा — 'विद्यापीठमें हरिजनोंको तो प्रवेश रहेगा न?' मैंने तुरन्त जवाब दिया — 'हाँ, रहेगा।' किन्तु हमारे नियामक मण्डलमें अैसे लोग थे, जिनकी अस्पृश्यता दूर करनेकी तैयारी नहीं थी। हमारी सम्बद्ध संस्थाओंमें अेक था मॉडल स्कूल। अुसके संचालक अिस सुधारके लिअे तैयार नहीं थे। और भी लोग अपनी अपनी कठिनाअियाँ पेश करने लगे। अुस दिन यह प्रश्न अनिश्चित ही रहा। अितना ही तय हुआ कि अिसके बारेमें बापूजीसे पूछेंगे। मैं निश्चिन्त था। आखिर बापूसे पूछा गया। अुन्होंने भी वही जवाब दिया जो मैंने दिया था।

अिस बातकी चर्चा गुजरात भरमें होने लगी। बम्बअीके चन्द वैष्णव धनिकोंने बापूके पास आकर कहा — 'राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य बड़ा धर्म कार्य है। हम अुसमें आप कहें अुतने पैसे दे सकते हैं, किन्तु हरिजनोंका सवाल आप छोड़ दीजिये। वह हमारे समझमें नहीं आता।' आये हुअे वैष्णव कुछ पाँच सात लाख रुपये देनेकी नियतसे आये थे। बापूजीने अुन्हें कहा — 'विद्यापीठ निधिकी बात तो अलग रही, कल अगर कोअी मुझे अस्पृश्यता कायम रखनेकी शर्त पर हिन्दुस्तानका स्वराज्य भी दे, तो अुसे मैं नहीं लूँगा।' बेचारे वैष्णव धनिक जैसे आये थे वैसे ही चले गये।

४५

आश्रमके प्रारम्भके दिनोंमें आसपास हमें अच्छा दूध नहीं मिलता था। अिसलिअे हमने अपना प्रबन्ध कर लिया, अच्छी अच्छी गायें और भैंसें रख लीं।

कुछ दिनोंके बाद बापूने हमे समझाया कि हमें गोरक्षा करनी है। भैंसको रखकर हम गायको नहीं बचा सकते। दोनोंको आश्रय देकर हम दोनोंका नाश कर रहे हैं। गायकी सबसे बड़ी प्रतिस्पर्धी है भैंस। बैल तो अपनी सेवाके बल पर बच जाता है, और भैंस अपने दूध, घीकी अधिकताके बल पर। रही गाय और भैंसके पाड़े। सो गाय कतल की जाती है और भैंसके पाड़े बचपनमें ही मार डाले जाते हैं।

नतीजा यह हुआ कि आश्रमसे सब भैंसें हटायी गयीं। केवल गोशाला ही रही।

अेक दिन गायका अेक बछड़ा बीमार हुआ। हम लोगोंने अुसकी दवाके लिअे जितनी कोशिशें हो सकती थीं कीं। देहातोंसे पशुरोगोंके जानकार आये। व्हेटरनरी डॉक्टर आये। जितना हो सकता था सब कुछ किया। किन्तु बछड़ा ठीक नहीं हुआ।

बछड़ेके अन्तिम कष्ट देखकर बापूने हम लोगोंके सामने प्रस्ताव रखा कि अिस मूक जानवरको अिस तरह पीड़ा सहन करते रखना घातकता है। अुसे मृत्युका विश्राम ही देना चाहिये।

अिस पर बड़ी चर्चा चली। श्री वल्लभभाअी अहमदाबादसे आये। कहने लगे — 'बछड़ा तो दो-तीन दिनमें आप ही मर जायेगा, किन्तु अुसे आप मार डालेंगे तो नाहक झगडा मोल लेंगे। देश भरके हिन्दू समाजमें खलबली मचेगी। अभी फंड अिकट्ठा करने बम्बअी जा रहे हैं। वहाँ हमें कोअी कौड़ी भी नहीं देगा। हमारा बहुतसा काम रुक जायेगा।'

बापूने सब कुछ ध्यानसे सुना और अपनी कठिनाअी पेश करते हुअे कहा — 'आपकी बात सब सही है। लेकिन बछड़ेका दुःख देखते हम

कैसे बैठ सकते हैं? हम अुसकी जो अन्तिम सेवा कर सकते हैं, वह न करें तो धर्मच्युत होंगे।'

अैसी बातोंमे वल्लभभाअी बापूसे कभी वादविवाद नहीं करते थे। वे चुपचाप चले गये। फिर बापूने हम सब आश्रमवासियोंको बुलाया। हमारी राय ली। मैंने कहा — 'आप जो करते हैं सो तो ठीक ही है। किन्तु अगर मुझे अपनी राय देनी है, तो मै गौशालामे जाकर बछड़ेको प्रत्यक्ष देख लूँ तभी अपनी राय दे सकता हूँ।' मैं गौशालामें गया। बछड़ा बेभान पड़ा था। मैं अपनी राय तय नहीं कर पाया। अिसलिअे वहाँ कुछ ठहरा। बादमें जब देखा कि बछड़ा जोर जोरसे टाँगें झटक रहा है, तो मैं बापूके पास गया और कह दिया — 'मैं आपके साथ पूर्णतया सहमत हूँ।' बापूने किसीको चिट्ठी लिखकर गोली चलाने वाले आदमियोंको बुलवाया। अुन्होंने कहा — 'गोलीसे मारनेकी जरूरत नहीं। डॉक्टर लोगोंके पास अैसा अिन्जेक्शन रहता है जो लगाते ही प्राणी शान्त हो जाता है।' अुस पर अेक पारसी डॉक्टर बुलवाया गया। अुसने अुस पीड़ित बछड़ेको 'मरण' दे दिया।

अिस पर तो देशभरमें खूब हो-हल्ला मचा था। बापूको कअी लेख लिखने पडे थे। सारा हिन्दू समाज जड-मूलसे हिल गया था। बापूकी अनन्य धर्मनिष्ठा और गौभक्तिके कारण ही वे अिस आन्दोलनसे बच सके।

४६

पंजाबके अत्याचार, खिलाफतका मामला और स्वराज्य प्राप्ति अिन तीन बातोंको लेकर बापूने अेक देश-व्यापी आन्दोलन शुरू किया। भारतके अितिहासमे शायद यह अपूर्व आन्दोलन था, जिसमे हिन्दू और मुसलमान अेक हुअे थे। यह अद्भुत दृश्य देखकर अंग्रेज भी घबरा गये। सरकारको लगने लगा कि गांधीजीके साथ कुछ न कुछ समझौता करना ही चाहिये। वाअिसरायने बापूको मिलनेके लिअे बुलवाया।

पंजाबका अत्याचार तो हो ही चुका था। अुसके बारेमें किसीको सजा दिलानेकी शर्त भी बापूने देशको नहीं रखने दी थी। सरकार अपनी भूल स्वीकार कर लेती, तो मामला तय हो जाता। बाकी रही थीं दो बातें। खिलाफत पर वाअिसरायकी दलील थी कि यह सवाल हिन्दुस्तानका नहीं, अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिका है। अुसमें कअी नाजुक बातें भरी हुअी हैं। अुसे छोड़ दो और केवल स्वराज्यकी बातें करो, तो आपसे समझौता हो जायगा। बापूने कहा — 'यह नहीं हो सकता। हिन्दुस्तानके मुसलमान हिन्दुस्तानका महत्वपूर्ण अंग हैं। अुनके दिलमें जो अन्यायकी चोट है, अुसके प्रति मैं अुदास नहीं रह सकता।'

अिसी पर समझौतेकी बात टूट गयी। देशके बड़े बड़े नेताओंने खानगी बातचीतमें बापूको दोष दिया। अुनका कहना था कि खिलाफतकी बात हिन्दुस्तानकी है ही नहीं। अुसे छोड़ देते तो क्या हर्ज था। स्वराज्य तो मिल जाता! (अुन दिनों स्वराज्यकी हमारी कल्पना आज-जैसी शुद्ध और निश्चित नहीं थी। जो कुछ मिलता अुसे ही शायद लोग स्वराज्य समझकर ले लेते और बड़ी राजनीतिक प्रगति मान लेते।) लेकिन बापूके सामने हमारे राजनैतिक चारित्र्यका प्रश्न था। मुसलमानोंको साथ दिया, अुनका दुःख अपना दुःख बनाया और अब अपनी चीज मिलते ही अुनका हाथ छोड़ देना यह तो दगाबाजी कहलाती। अिस तरह दगाबाजी करके जो भी मिले वह बापूकी नजरमें मलिन ही था। अिसीलिअे अपना शुद्ध निर्णय वाअिसरायको कहते अुन्हें तनिक भी संकोच नहीं हुआ।

४७

चि० चन्दनकी मेरे लड़केके साथ शादी तय हुअी थी। वह आक्सफोर्डमें पढ़ता था और चन्दन अपनी अमेरिकाकी पढ़ाअी पूरी करके हिन्दुस्तान लौटी थी। वह वर्धा आयी। बापू कहने लगे — 'यह चन्दन तो अंग्रेजी सीखकर विदुषी होकर आयी है। यह क्या काम की? अुसे हिन्दी तो आती ही नहीं। शादी होनेके बाद क्या पढ़ेगी? अभीसे अुसे हिन्दी सिखानेका कुछ प्रबन्ध करना चाहिये।' हम दोनोंने

तय किया कि अुसे देहरादून कन्या गुरुकुलमे भेज दें। पूज्य बाको वहाँ अुत्सवके निमित्त जाना ही था। मुझे भी अुन्होंने बुलाया था। हम चन्दनको साथ ले गये। वहाँके लोगोंने अुसे हिन्दी पढ़ानेका प्रबन्ध किया और बदलेमें अुससे पढ़ानेका काम भी लिया। वह बोस्टन विश्वविद्यालयकी सोशियॉलाजी (समाजशास्त्र) मे अेम० अे० थी। अितनेमे बापूका राजकोटका सत्याग्रह शुरू हुआ। चन्दन काठियावाड़की लड़की ठहरी। अुससे कैसे रहा जा सकता था। वह सत्याग्रहमें शरीक होनेके लिअे देहरादूनसे राजकोट गयी। अितनेमें समझौता होकर सत्याग्रह स्थगित हो गया और बापू वर्धा आ गये। चन्दन राजकोटमे कुछ बीमार हो गयी।

वर्धामें चन्दनका पत्र आया कि मैं बीमार हूँ। अुस दिन बापू वर्धासे बम्बअी जा रहे थे। मैं बापूको पहुँचाने स्टेशन पर गया था। मैंने चन्दनके बीमार होनेकी बात सुनायी। बापू तफसील पूछने लगे। मैंने चन्दनका पत्र ही अुनके हाथमें दे दिया। स्टेशन पर भीड़ होनेके कारण वे अुसे पढ़ न सके, साथ ही ले गये।

दूसरे दिन सुबह बम्बअी पहुँचनेके पहले ही अुन्होंने चन्दनको अेक तार भेजा जिसमें क्या दवा करनी चाहिये, किन बातोंकी सँभाल रखनी चाहिये, सब कुछ लिखा था। और तुरन्त अहमदाबाद जाकर अमुक वैद्यकी दवा लेनेकी सूचना भी की थी। तार खासा १२-१५ रुपयोंका था। अैसे काममे चाहे जितना खर्च हो बापूको सकोच नहीं रहता है। और जहाँ कंजूसी करने बैठते हैं, वहाँ तो पाअी पाअीकी काट कसर करते हैं।

४८

अेक समय बापू दार्जिलिंगमे थे। बंगालमें प्रान्तीय परिषद् होनेवाली थी। अुसमे चित्तरंजन दासका किसी पक्षसे बड़ा विरोध होनेवाला था। अुन्होंने बापूको अुपस्थित रहनेके लिअे कहा था। बापूने स्वीकार भी किया था।

निश्चित समय पर बापू दार्जिलिंगसे निकलनेके लिअे प्रस्तुत हुअे। (बापूकी गफलत नहीं थी, मोटरकी कोअी गड़बड़ी हुअी होगी या क्या,

मुझे ठीक याद नहीं है।) लेकिन स्टेशन पर पहुँचे तो देखा कि मेल चली गयी है। अब क्या किया जाय? बापूने सोचा यह अच्छा नहीं हुआ। अुन्होंने तुरन्त रेलवे स्टेशनसे ही तार भेजकर अेक स्पेशल ट्रेन मँगवायी और चले। अिसमें कुछ समय तो लगा ही। अुधर जहाँ कान्फरेन्स होनेवाली थी, वहाँ लोग स्टेशन पर बापूको लेने गये थे। अुन्होंने देखा बापू डाकगाड़ीमें नहीं है। दासबाबू बड़े मायूस हो गये थे। वह स्वाभाविक भी था।

कान्फरेन्सकी कार्रवाअी शुरू हो गयी थी। अितनेमें पंडालके सामने ही रेलवे लाअिन पर स्पेशल ट्रेन आकर खड़ी हो गयी। बापू अुतरे। बापूको देखकर दासबाबूकी आँखोंमें आँसू भर आये। विरोध हवा हो गया। और अुस दिनका काम कल्पनातीत सफलतासे सम्पन्न हुआ।

४९

यह तो हुअी बड़ोंकी बात।

अेक समय हम मद्रासकी ओर खादी दौरेमें घूम रहे थे। शायद कालीकट पहुँचे थे। वहाँसे अुत्तरकी ओर नीलेश्वर नामक अेक छोटा-सा केन्द्र है। वहाँ मेरा अेक विद्यार्थी बड़ी ही प्रतिकूल परिस्थितिमें खादीका कार्य करता था। अुसे बापूके आगमनकी आशा थी। अुसने स्वागतकी तैयारी भी की थी। पर कार्यक्रममें कुछ अैसी बाधा पड़ी कि नीलेश्वरका कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। बापूसे यह सहा न गया। कहने लगे — 'बेचारा कितनी श्रद्धासे काम कर रहा है, अेक कोनेमें पड़ा है, किसीकी सहानुभूति नहीं। वहाँ तो मुझे जाना ही चाहिये।' बापूका स्वास्थ्य भी अुन दिनों अच्छा नहीं था। राजाजीने बताया कि किसी भी सूरतसे नीलेश्वर जाना सम्भव नहीं है। बापूने अुत्तेजित होकर कहा — 'सम्भव क्यों नहीं है? स्पेशल ट्रेनका प्रबन्ध करो। अुस लड़केकी श्रद्धाकी मुझे कीमत है।' राजाजी खर्च करनेके लिअे तैयार थे, किन्तु बापूको काफी कष्ट होनेका डर था। अुनके स्वास्थ्यको भी खतरा था। राजाजी बापूको समझानेकी कोशिश करने लगे। महादेवभाअीने भी समझाया। अन्तमें मैंने कहा — "राजाजीकी बात मुझे भी ठीक लगती है। मैं अुस

७३

यरवड़ा जेलमें हम शामको टहल रहे थे। किसी सिलसिलेमें बापू कहने लगे — 'कोअी विषय सामने आते ही आजकल तो मुझे अुस पर लिखनेमें देर नहीं लगती। लेकिन अिसका मतलब यह नहीं कि अिसके लिअे मैंने साधना नहीं की। दक्षिण अफ्रीकामें अेक साथीको कानूनके अिम्तिहानमें बैठना था। अुसके पास न काफी समय था न शक्ति। मैं अुसके लिअे डच लॉके नोट्स निकालता और रोज पैदल अुसके घर जाकर अुसे कानून सिखाता था। अिधर मेरे मुकदमे भी अिस तरह तैयार करके कोर्टमें ले जाता था कि मानो मुझे आज अिम्तिहानमें बैठना हो।'

अिसके पहले मैंने श्री मगनलालभाअीके मुँहसे सुना था कि दक्षिण अफ्रीकामे अेक वक्त अेक मुसलमान बटलरने बापूसे आकर कहा कि यदि मुझे अंग्रेजी आती होती तो अच्छी तनख्वाह मिल जाती। आजकी तनख्वाहमें मेरा पूरा नहीं पड़ता। बस, बापूने तो अुसे अंग्रेजी सिखानेकी तैयारी कर ली। अिस पर वह कहने लगा कि 'आप तो तैयार हो गये, यह आपकी मेहरबानी है। लेकिन मैं नौकरी करूँ या आपके पास अंग्रेजी सीखने आअूँ?' अिसका अिलाज भी बापूने ढूँढ़ निकाला। रोज चार मील पैदल जाकर अुसके घर अुसे अंग्रेजी पढ़ाने लगे।

७४

साल तो ठीक याद नहीं। मैं चिंचवडसे लौटा था। बापूकी आत्मकथा 'नवजीवन'में प्रकरणशः प्रकाशित हो रही थी। अुसके बारेमें चर्चा चली। मैंने कहा — 'आपकी 'आत्मकथा' तो विश्व-साहित्यमें अेक अद्वितीय वस्तु गिनी जायगी। लोग तो अभीसे अुसे यह स्थान देने लगे हैं। लेकिन मुझे अुससे पूरा सन्तोष नहीं हुआ। युवावस्थामें जब मनुष्यको अपने जीवनके आदर्श तय करने पड़ते हैं, अपने लिअे कौनसी लाअिन अनुकूल होगी अिस चिन्तामें वह जब पड़ता है, तब मनका मन्थन महासंग्रामसे कम नहीं होता। अुस कालमें कअी परस्पर विरोधी आदर्श भी अेक-से आकर्षक दिखाअी देते हैं। मैं आपकी 'आत्मकथा'मे अैसे मनोमन्थन देखना चाहता था। लेकिन वैसा कुछ नहीं दिख पड़ता। अंग्रेजोंको देशसे भगानेके लिअे आप मांस तक खानेको तैयार हो गये। अिस अेक सिरेकी भूमिकासे अहिंसाकी दूसरे सिरेकी भूमिका पर आप कैसे आये, यह सारी गड़मथन आपने कहीं नहीं लिखी।'

अिस पर बापूने जवाब दिया — 'मैं तो अेकमार्गी आदमी हूँ। तुम कहते हो वैसा मन्थन मेरे मनमें नहीं चलता। कैसी भी परिस्थिति सामने आवे, अुस वक्त मै अितना ही सोचता हूँ कि अुसमें मेरा कर्तव्य क्या है। वह तय हो जाने पर मैं अुसमें लग जाता हूँ। यह तरीका है मेरा।'

तब फिर मैंने दूसरा प्रश्न पूछा — "'सामान्य लोगोंसे मैं कुछ भिन्न हूँ, मेरे सामने जीवनका अेक मिशन है।' अैसा भान आपको कबसे हुआ? क्या हाअीस्कूलमें पढ़ते थे तब कभी आपको अैसा लगा था कि मैं सब जैसा नहीं हूँ?"

मेरे प्रश्नकी ओर शायद बापूने ध्यान नहीं दिया होगा। अुन्होंने अितना ही कहा — 'बेशक, हाअीस्कूलमे मैं अपने क्लासके लड़कोंका अगुवा बनता था।'

अितनेमें कोअी आ गया और यह महत्वका प्रश्न अैसा ही रह गया।

'आत्मकथा'के बारेमें ही फिर अेक दफे मैंने चर्चा करते हुअे कहा — 'बापूजी, आपने 'आत्मकथा'में बहुत ही कंजूसी की है। कितनी ही अच्छी बातें छोड़ दीं। जहाँ आपने 'आत्मकथा' पूरी की है, अुसके आगे की बातें आप शायद ही लिखेंगे। अगर छूटी हुअी बातें लिख दें, तो 'आत्मकथा' जैसा ही अेक और बडा समान्तर ग्रन्थ तैयार हो जाय। बापू कहने लगे — 'अैसा थोड़ा ही है कि सब बातें मैं ही लिखूँ। जो तुम जानते हो तुम लिखो।'

मैंने कहा — 'कहीं कहीं तो अैसा मालूम होता है कि आपने जानबूझकर बातें छोड़ दी हैं। अपने विरुद्ध बातें तो आपने मानो चावसे लिखी हैं। लेकिन औरोंके बारेमें अैसा नहीं किया। जैसे दक्षिण अफ्रीकामें आपके घर पर रहते हुअे, आपकी अनुपस्थितिमें आपका मित्र अेक वेश्या ले आया था, अुसका वर्णन तो ठीक है। लेकिन यह नहीं लिखा कि यह व्यक्ति वही मुसलमान था जिसने हाअीस्कूलके दिनोंमें आपको मांस खानेकी ओर प्रवृत्त किया था और जिसके कारण आपने घरमें चोरी की थी।'

बापूने कहा — 'तुम्हारी बात ठीक है। यह मैंने जानबूझकर ही नहीं लिखा। मुझे तो 'आत्मकथा' लिखनी थी। अुसमें अिस बातका जिक्र जरूरी नहीं था। दूसरी बात यह है कि वह आदमी अभी जीवित है। कुछ लोग अुसका मेरा सम्बन्ध जानते भी हैं। दोनों प्रसंग अेक होनेसे अुसके प्रति अुन लोगोंके मनमें घृणा बढ़ सकती है।'

हर मनुष्यके लिअे बापूके मनमें कितना कारुण्य है, यह देखकर मुझे अेक पुरानी बातका स्मरण हो आया:

बनारस हिन्दू युनिवर्सिटीवाले बापूके भाषणके बाद, अखबारोंमें बापू और श्रीमती बेसंटके बारेमें बड़ी लम्बी-चौडी और तीखी चर्चा चल पड़ी थी। अुसी सिलसिलेमें बम्बअीके अिण्डियन सोशल रिफार्मरमें श्री नटराजन्ने बापूके बारेमें लिखा था Every one's honour is safe in his hands — बापूके हाथों किसीकी अिज्जतको खतरा नहीं है।

बापूके चरित्रका यह पहलू नटराजन्‌ने ही अैसे सुन्दर शब्दोंमें व्यक्त किया है।

अिसी प्रसगके साथ अेक और प्रसग याद आता है.

अेक प्रमुख मुस्लिम कार्यकर्ताके बारेमें बातें चल रही थीं। मैंने अुसके किसी सार्वजनिक अनुचित व्यवहारका जिक्र किया। बापूने दुःखके साथ कहा — 'तबसे अुसकी मेरे पास पहले जैसी कीमत नहीं रही। लेकिन अुससे क्या? अुसका कुछ नुकसान नहीं होगा। मेरे मनमें किसीकी कीमत बढ़ी तो क्या और घटी तो क्या? मेरा प्रेम थोड़े ही कम होनेवाला है।'

७६

१९२६–२७ की बात है। खादीदौरा पूरा करके बापू अुड़ीसा पहुँचे। वहाँ हम लोग औटामाटी नामके अेक गाँवमें पहुँचे। बापूका व्याख्यान हुआ। फिर लोग अपनी अपनी भेंट और चन्दा लेकर आये। कोअी कुम्हड़ा लाया, कोअी बिजौरा (बिजपुर, मातुलिंग) लाया, कोअी बैंगन लाया और कोअी जंगलकी भाजी। कुछ गरीबोंने अपने चीथड़ोंसे छोड़ छोड़कर कुछ पैसे भी दिये। सभामें घूम घूमकर मैं पैसे अिकट्ठे कर रहा था। पैसोंके जगसे मेरे हाथ हरे हरे हो गये थे। मैंने बापूको अपने हाथ दिखाये। मुझसे बोला न गया। दूसरे दिन सुबह बापूके साथ घूमने निकला। रास्ता छोड़कर हम खेतोंमें घूमने चले। तब बापू कहने लगे — 'कितना दारिद्र्य और दैन्य है यहाँ! क्या किया जाय अिन लोगोंके लिअे? जी चाहता है कि मेरी मरणकी घड़ीमे अुड़ीसामें आकर अिन लोगोंके बीच मरूँ। अुस समय जो लोग मुझे यहाँ मिलने आयेंगे, वे तो अिन लोगोंकी करुण दशा देखेंगे। किसी न किसीका तो हृदय पसीजेगा और वह अिनकी सेवाके लिअे आकर यहाँ स्थायी हो जायगा।'

अिस पर मैं क्या कह सकता था! अुनकी अिस पवित्र भावनाका धन्य साक्षी ही हो सका।

७७

अिसी दौरेमें हम चारबटिया पहुँचे। वहाँ भी अैसी अेक सभा हुअी। मैं खयाल करता था कि अीटामाटीसे बढ़कर करुण दृश्य कहीं नहीं होगा। लेकिन चारबटियाका तो अुससे भी बढ़ गया। लोग आये थे तो थोड़े, लेकिन जितने भी थे अुनमेंसे किसीके मुँह पर चैतन्य नहीं दिखाअी देता था। प्रेतकें-जैसी शून्यता थी।

यहाँ पर भी बापूने पैसेके लिअे अपील की। लोगोंने भी कुछ न कुछ निकालकर दिया ही। मेरे हाथ वैसे ही हरे हो गये।

अिन लोगोंने रुपये तो कभी देखे ही नहीं थे। ताँबेके पैसे ही अुनका बड़ा धन था। कोअी पैसा हाथमें आ गया, तो अुसे खर्च करनेकी ये कभी हिम्मत ही नहीं कर पाते थे। बहुत दिन तक बाँधे रखनेसे या जमीनमें गाड़नेके कारण अुन पर जंग चढ़ जाता था।

मैंने बापूसे कहा — 'अिन लोगोंसे अैसे पैसे लेकर क्या होगा?' बापूने कहा — 'यह तो पवित्र दान है। यह हमारे लिअे दीक्षा है। अिसके द्वारा यहाँकी निराश जनताके हृदयमें भी आशाका अंकुर अुगा है। यह पैसा अुस आशाका प्रतीक है। ये मानने लगे हैं कि हमारा भी अुद्धार होगा।'

वह स्थान और दिन याद रहनेका अेक कारण और भी हुआ। रातको हम वहीं सोये। दूसरे दिन सूर्योदय अितना सुन्दर था कि बापूने मुझे देखनेको बुलाया। फिर मुझे पूछने लगे — 'तुम तो (गूजरात) विद्यापीठकी हालत जानते हो। अगर मैं अुसका चार्ज तुम्हें दे दूँ तो लोगे?' मैंने कहा — 'बापूजी, विद्यापीठकी हालत जितनी आप जानते हैं, अुससे अधिक मैं जानता हूँ। सवाल पेचीदा हो गया है। लेकिन कमसे-कम किसी अेक बातमें आपको निश्चिंत करनेके लिअे मैं अुसका चार्ज लेनेको तैयार हूँ।' बापूने कहा — 'किसी डॉक्टरके पास जब कोअी मरीज आता है, तब वह जैसी भी हालतमें हो डॉक्टर अुसकी चिकित्सा करनेसे

अिनकार नहीं कर सकता। डॉक्टर यह तो कह ही नहीं सकता कि जिसके वचनेकी खातरी हो, अुसी रोगीकी मैं चिकित्सा करूँगा।'

मैंने कहा — 'अितनी खराब हालत नहीं है। मैं जरूर विद्यापीठको अच्छे पाये पर ला दूँगा, और धीमे धीमे अुसे ग्रामोन्मुख भी कर दूँगा।'

जब मैंने विद्यापीठका चार्ज लिया, तो अुसके अभ्यास-क्रममें खादी, बढ़अी-काम आदि तो शुरू किये ही; साथ ही 'ग्राम-सेवा-दीक्षित' की नयी अुपाधि स्थापित करके अुसके लिअे भी विद्यार्थी तैयार किये। श्री बबलभाअी मेहता और झवेरभाअी पटेल अुसी ग्रामसेवा मन्दिरके आदि-दीक्षित हैं। सब जानते ही हैं कि अिन दोनोंने ग्रामसेवाका काम कैसा अच्छा चलाया है। बबलभाअीने अपने जो अनुभव 'मारूं गामडूं' (मेरा गाँव) नामक किताबमें दिये हैं, वे किसी अुपन्यास-जैसे रोमांचकारी मालूम होते हैं।

७८

हिन्दुस्तान लौटे बापूको बहुत दिन नहीं हुअे थे। किसी कारण वश अुन्हें बम्बअी जाना पड़ा। वहाँ बुखार आ गया। वे रेवाशंकरभाअीके मणिभुवनमें ठहरे थे। वहाँ महादेवभाअी अुनकी सेवामें थे। अेक दिन बुखार अितना चढ़ा कि सन्निपात हो गया। रातको महादेवभाअीको जगाकर कहने लगे — 'महादेव, ये बंगाली लोग कलकत्तेमें कालीके नामसे कालीघाटके मन्दिरमें पशु-हत्या करते हैं। अिन्हें कैसे समझाया जाय कि यह धर्म नहीं, महा अधर्म है? चल, हम दोनों जाकर सत्याग्रह करें, अुन्हें रोकें। फिर चिढ़े हुअे बंगाली ब्राह्मण वहाँ हम पर टूट पड़ेंगे और हमारे टुकड़े टुकड़े कर डालेंगे। अिस पशु-हत्याको रोकनेमें यदि हमारे प्राण चले जायँ तो क्या बुरा है?'

यह बात मैंने महादेवभाअीके मुँहसे ही सुनी है।

मद्रासका सन् '२६ का कांग्रेस अधिवेशन था। हम श्री श्रीनिवास अय्यगारजीके मकान पर ठहरे थे। वे हिन्दू-मुस्लिम अेकताके निस्बत अेक मसविदा तैयार करके बापूकी सम्मतिके लिअे लाये। अुन दिनों बापू देशकी राजनीतिसे निवृत्त-से हो गये थे। वे अपनी सारी शक्ति खादी कार्यमें ही लगाते थे। वह मसविदा अुनके हाथमें आया, तो वे कहने लगे — 'किसीके भी प्रयत्नसे और कैसी भी शर्त पर हिन्दू-मुस्लिम समझौता हो जाय तो मंजूर है। मुझे अिसमें क्या दिखाना है?' फिर भी वह मसविदा बापूको दिखाया गया। अुन्होंने सरसरी निगाहसे देखकर कहा — 'ठीक है।'

शामकी प्रार्थना करके बापू जल्दी सो गये। सुबह बहुत जल्दी अुठे। महादेवभाअीको जगाया। मैं भी जग गया। कहने लगे — 'बड़ी गलती हो गयी। कल शामका मसविदा मैंने ध्यानसे नहीं पढ़ा। यों ही कह दिया कि ठीक है। रातको याद आयी कि अुसमें मुसलमानोंको गो-वध करनेकी आम अिजाजत दी गयी है और हमारा गोरक्षाका सवाल यों ही छोड़ दिया गया है। यह मुझसे कैसे बरदाश्त होगा? वे गायका वध करें, तो हम अुन्हें जबरदस्ती तो नहीं रोक सकते। लेकिन अुनकी सेवा करके तो अुन्हे समझा सकते हैं न? मैं तो स्वराज्यके लिअे भी गोरक्षाका आदर्श नहीं छोड़ सकता। अुन लोगोंको अभी जाकर कह आओ कि वह समझौता मुझे मान्य नहीं है। नतीजा चाहे जो कुछ भी हो, किन्तु मैं बेचारी गायोंको अिस तरह छोड़ नहीं सकता।'

सामान्य तौर पर कैसी भी हालतमें बापूकी आवाजमें क्षोभ नहीं रहता, वे शान्तिसे ही बोलते हैं। लेकिन अूपरकी बातें बोलते समय वे अुत्तेजित-से मालूम होते थे। मैंने मनमें कहा — 'अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयं। यद्राज्यलाभलोभेन गां परित्यक्तुमुद्यताः ॥' बापूकी हालत अैसी ही थी।

८०

मिसेस् अेनी वेसेन्टने होमरूल लीगकी स्थापना की और हिन्दुस्तानमें राजनीतिक आन्दोलन जोरोंसे चलाया। सरकारने अुन्हें नजरकैद कर दिया। अब अुसके लिअे क्या किया जाय, यह सोचनेके लिअे श्री शकरलाल बैंकर बापूके पास आये। बापूने अुन्हें सत्याग्रहकी सिफारिश करनेवाला पत्र लिखा। वह पत्र श्री शंकरलालभाअीने प्रकाशित कर दिया और सत्याग्रहकी तैयारी की। यह सब देखकर सरकारने मिसेस् अेनी बेसेन्टको मुक्त कर दिया।

फिर तो आन्दोलनका रूप ही बदल गया। असहयोगके दिन आ गये। मिसेस् अेनी बेसेन्टने 'न्यू अिण्डिया' नामक अेक अंग्रेजी दैनिक पत्र चलाया। अुसमें बापूके खिलाफ रोज कुछ न कुछ लिखा जाने लगा। अेक दिन अुसमें बहुत ही खराब लेख आया। मैंने बापूसे पूछा — 'कलके 'न्यू अिण्डिया'का लेख आपने पढ़ा है?' बापू कहने लगे — 'मैंने 'न्यू अिण्डिया' पढ़ना कबसे छोड़ दिया है। जब तक कोअी खास दलील वाले लेख आते थे, मैं अुसे पढ़ता था। लेकिन जब देखा कि अुसमें मुझपर व्यक्तिगत टीका ही होने लगी है, तो मैंने पढ़ना छोड़ दिया। व्यक्तिगत टीका सुननेसे अुसका मन पर कुछ न कुछ असर होनेकी सम्भावना रहती है। पढ़ा ही नहीं, तो मनका सद्भाव जैसाका तैसा रहता है। अब यदि मैं मिसेस् वेसेन्टसे मिला तो मेरे मनमें अुनके प्रति जो आदरभाव है, अुसमें कमी नहीं होगी।

८१

आश्रमकी स्थापनाके दिन थे। हम कोचरबके बंगलेमें रहते थे। अपनी संस्थाके लिअे धन अिकट्ठा करनेके लिअे प्रोफेसर कर्वे अहमदाबाद आये थे। वे बापूसे मिलने आश्रममें आये।

बापूने सब आश्रमवासियोंको अिकट्ठा किया और सबको अुन्हें साष्टांग नमस्कार करनेके लिअे कहा। फिर समझाने लगे — 'गोखलेजी दक्षिण

अफ्रीकामें आये थे, तब मैंने अुनसे पूछा था कि आपके प्रान्तमें सत्यनिष्ठ लोग कौन कौन हैं? अुन्होंने कहा था कि मैं अपना नाम तो दे ही नहीं सकता। मैं कोशिश तो करता हूँ कि सत्य पथ पर ही चलूँ, लेकिन राजनीतिके मामलेमें कभी कभी असत्य मुँहसे निकल ही जाता है। मैं जिनको जानता हूँ, अुनमें तीन आदमी पूरे पूरे सत्यवादी हैं: अेक प्रोफेसर कर्वे, दूसरे शंकरराव लवाटे (ये मद्य-निषेधका कार्य करते थे।) और तीसरे . . .।' आगे बोले — 'सत्यनिष्ठ लोग हमारे लिअे तीर्थ-जैसे हैं। सत्याग्रह आश्रमकी स्थापना सत्यकी अुपासनाके लिअे ही है। अैसे आश्रममें कोअी सत्यनिष्ठ मूर्ति पधारे, तो हमारे लिअे वह मंगल दिन है।'

बेचारे कर्वे तो गद्‌गद हो गये। कुछ जवाब ही नहीं दे सके। कहने लगे — 'गांधीजी, आपने मुझे अच्छा झेंपाया। आपके सामने मैं कौन चीज हूँ?'

८२

सन् '३०में मैं यरवड़ा जेलमें बापूके साथ रहनेके लिअे भेजा गया। मैं अपने साथ काफी पूनियाँ ले गया था। वहाँ मुझे पाँच महीनेसे ज्यादा नहीं रहना था। मेरी पूनियाँ अितनी थीं कि पाँच महीने मुझे बाहरसे मँगवानेकी जरूरत नहीं रहती। लेकिन हुआ यह कि कुछ ही दिनोंमें सरकारने श्री वल्लभभाअीको भी यरवड़ा जेलमें लाकर रख दिया। अुनके और हमारे बीच थी तो सिर्फ अेक ही दीवाल; लेकिन हम मिल नहीं सकते थे। बापूको अिसका बहुत ही बुरा लगता। कहते — 'यह सरकार कैसी तंग कर रही है! वल्लभभाअीको साबरमतीसे यहाँ ले आयी। हम अुनकी आवाज भी कभी कभी सुन सकते हैं, किन्तु मिल नहीं सकते। सरकारको अिसमें क्या मजा आता होगा?' जो लोग बापूको दूरसे ही देखते हैं, वे अुनकी धीरोदात्तता ही देख सकते हैं। अुनका प्रेम कितना अुत्कट है और अुसपर आघात लगनेसे वे कितने घायल होते हैं, यह तो बाहरके लोग नहीं जान सकते। बापू जब